ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः, श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

# कृष्ण यजुर्वेदीय तैतिरीय ब्राह्मणम्

अच्छिद्रं, अश्वमेधं & काठकं

तृतीयाष्टकं - प्रपाठकः 7 - 12

#### **Version Notes:**

This is now the current Version 1.1 dated August 31, 2020.

- 1. This replaces the earlier version 1.0 dated Jan 31, 2020.
- 1. This version has been updated with the errors found and reported till Aug 15, 2020.
- 2. Required convention, style and presentation improvements or standardisations has been done whereever applicable.

#### **Earlier Versions**

1st Version Number 1.0 dated 31st Mar 2019 2nd Version Number 1.0 dated 31st Jan 2020

# **Table of Contents**

| 3. | कृष्ण र | यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं   | 9  |
|----|---------|--|----|
|    |         | तेरीय ब्राह्मणे तृतियाष्टके सप्तमः प्रपाठकः अच्छिद्रं काण्डं प्रायश्चित्तेन मन्त्र<br>पूरणादच्छिद्रमुच्यते |    |
|    | 3.7.1   | अनुवाकं 1 – दर्शपूर्णमासेष्टिविषयाणि कानि चित्प्रायश्चित्तानि  | 9  |
|    | 3.7.2   | अनुवाकं 2 –अग्निहोत्रसाम्नाय्यसाधारणानि प्रायश्चित्तानि  | 13 |
|    | 3.7.3   | अनुवाकं 3 –मुख्याग्न्यसंभवेऽनुकल्पाः होमाधाराः   | 17 |
|    | 3.7.4   | अनुवाकं 4 –ऐष्टिकयाजमानमन्त्राः  | 20 |
|    | 3.7.5   | अनुवाकं 5 –ऐष्टिकयाजमानमन्त्राः  | 27 |
|    | 3.7.6   | अनुवाकं 6 –ऐष्टिकयाजमानमन्त्राः  | 32 |
|    |         | अनुवाकं ७ –सोमाङ्ग.भूतेषु मन्त्रेषु –दीक्षामारभ्याग्नीषोमयि पशुपर्यन्ते प्रय                               |    |
|    | शेषभूत  | ा मन्त्राः   | 41 |
|    | 3.7.8   | अनुवाकं 8 –पशुविषया अच्छिद्रमन्त्राः   | 47 |
|    | 3.7.9   | अनुवाकं 9 –उपांश्वभिषवा मन्त्राः   | 49 |
|    | 3.7.10  | अनुवाकं 10 –सौमिकप्रायाश्चित्तमन्त्राः   | 52 |
|    | 3.7.11  | अनुवाकं 11 –दर्शपूर्णमासप्रायश्चित्तमन्त्राः   | 55 |
|    | 3.7.12  | अनुवाकं 12 –अग्निष्टोमादौ यजमानजप्या मन्त्रविशेषाः   | 57 |
|    | 3.7.13  | अनुवाकं 13 –अवभृथे कर्मणि ऋजीषप्रोक्षणमन्त्राः   | 60 |
|    | 3.7.14  | अनुवाकं 14 –अवभृथे कर्मणि सेचनादिमन्त्राः  | 62 |
| Αį | pend    | ix (of expansions)   | 66 |
| 3. | कृष्ण र | पजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं   | 72 |
|    |         |  |    |

| 3.8 तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः (अश्वमेधब्राह्मणं वैश्वदेवं काण | डं)72 |
|---|-------|
| 3.8.1 अनुवाकं 1 –सांग्रहण्येष्ट्यादयः याजमानसंस्काराः                               | 72    |
| 3.8.2 अनुवाकं 2 –ब्रह्मौदनाभिधानम्  | 73    |
| 3.8.3 अनुवाकं 3 –रशनयाऽश्वबन्धनम्   | 75    |
| 3.8.4 अनुवाकं 4 –अश्वस्य जलेऽवगाहनम्  | 78    |
| 3.8.5 अनुवाकं 5 –अश्वस्य प्रोक्षणं महर्त्विजाम्                                     | 79    |
| 3.8.6 अनुवाकं 6 –भूमौ पततां बिन्दूनामभिमन्त्रणम्                                    | 81    |
| 3.8.7 अनुवाकं 7 –अथाध्वर्युप्रोक्षणम्   | 84    |
| 3.8.8 अनुवाकं 8 –अश्वचरितानामश्चरूपाणां च होमाः                                     | 86    |
| 3.8.9 अनुवाकं 9 –अश्वस्य नाम्नामभिवाचनं, उथ्सर्गश्च                                 | 88    |
| 3.8.10 अनुवाकं 10 -दीक्षाभिधानम् तत्र वैश्वदेवहोमः                                  | 90    |
| 3.8.11 अनुवाकं 11 -वैश्वदेवहोममन्त्रव्याख्यानम्                                     | 92    |
| 3.8.12 अनुवाकं 12 –अश्वसंचरणवथ्सरे प्रतिदिनं देवयजनदेशे                             |       |
| कर्तव्यमिष्टित्रयमभिधीयते   | 94    |
| 3.8.13 अनुवाकं 13 –संवथ्सरार्द्ध्वमुख्यस्याग्रेरूपस्थानम्                           | 95    |
| 3.8.14 अनुवाकं 14 -अन्नहोमाः. त्रिरात्ररूपस्याश्वमेधस्य प्रथमदिनरात्रौ              | 97    |
| 3.8.15 अनुवाकं 15 –तत्प्रकारविशेष   | 100   |
| 3.8.16 अनुवाकं 16 -विवरणमेतयोः  | 101   |
| 3.8.17 अनुवाकं 17 -सप्तमकाण्डगतान्नहोमानुवाका व्याख्यायन्ते                         | 103   |
| 3.8.18 अनुवाकं 18 -सप्तमकाण्डगतान्नहोमानुवाका व्याख्यायन्ते                         | 106   |

|    | 3.8.19    | अनुवाकं 19 –औपसथ्यदिने यूपप्रयोगाः110                                    | ) |
|----|-----------|--|---|
|    | 3.8.20    | अनुवाकं 20 -यूपानां स्थानादयः11  | 1 |
|    | 3.8.21    | अनुवाकं 21 –चेतव्याग्नयादेर्विशेषः113                                    | 3 |
|    | 3.8.22    | अनुवाकं 22 –उक्थ्याख्ये द्वितीयेऽहिन बहिष्पवमाने अश्वस्योद्रातृत्वम्11   | 5 |
|    | 3.8.23    | अनुवाकं 23 –अश्वे पर्यग्न्यप्रयन्तानां पशूनां नियोजनं117                 | 7 |
| 3. | कृष्ण य   | जुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं12                              | 1 |
|    | 3.9       | तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः (अश्वमेधस्य द्वितीय-तृतीया |   |
| ह  | र्विधानम् |  | 1 |
|    | 3.9.1     | अनुवाकं 1 –अष्टादिशनां ग्राभ्याणां आरण्यानां च पशूनां प्रयोगः12          | 1 |
|    | 3.9.2     | अनुवाकं 2 –चातुर्मास्यपशूनां प्रयोगः123                                  | 3 |
|    | 3.9.3     | अनुवाकं 3 –रोहितादीनां पशूनां वपाहोमसाहित्यम्125                         | 5 |
|    | 3.9.4     | अनुवाकं 4 -अश्वस्य रथयोजनालंकारादयः126                                   | ō |
|    | 3.9.5     | अनुवाकं 5 - ब्रह्मोद्यनामकः होतृब्राह्मणोस्संवादः130                     | ) |
|    | 3.9.6     | अनुवाकं 6 –अश्वस्य मृतोपचारः संज्ञपनप्रकारः133                           | 3 |
|    | 3.9.7     | अनुवाकं ७ -तत्र मन्त्राः135  | 5 |
|    | 3.9.8     | अनुवाकं 8 –अश्वमेधस्य तत्पशूनां च प्रशंसा137                             | 7 |
|    | 3.9.9     | अनुवाकं ९ –उत्तमेऽहिन प्रश्वः139   | Э |
|    | 3.9.10    | अनुवाकं 10 -महिमाभिधानौ प्रहौ14:   | 1 |
|    | 3.9.11    | अनुवाकं 11 -शरीरहोमाः स्विष्टकृदादयश्च142                                | 2 |
|    | 3.9.12    | अनुवाकं 12 –तदुभयहोममध्यवर्त्यश्चस्तोमीयहोमः144                          | 1 |

| 3.9.13 अनुवाकं 13 –संवथ्सरानुष्ठानमिष्टीनाम्145  |
|--|
| 3.9.14 अनुवाकं 14 –तास्विष्टिषु ब्राह्मणराजन्ययोर्गानम्146                                   |
| 3.9.15 अनुवाकं 15 -अवभृथहोमविशेषाः148  |
| 3.9.16 अनुवाकं 16 –उपाकरणमन्त्रव्याख्यानादिः150  |
| 3.9.17 अनुवाकं 17 –अश्वस्य रोगादिनिमित्तं प्रायश्चित्तम् 152                                 |
| 3.9.18 अनुवाकं 18 –ब्रह्मौदना उच्यन्ते154  |
| 3.9.19 अनुवाकं 19 –विभुत्वादिभिः द्वादशभिर्गुणौरश्चमेधप्रशंसा 155                            |
| 3.9.20 अनुवाकं 20 -अश्वसंज्ञपनप्रकारः157   |
| 3.9.21 अनुवाकं 21 –उत्तरवेद्युपवापः159   |
| 3.9.22 अनुवाकं 22 –ऋषभालम्भः160  |
| 3.9.23 अनुवाकं 23 –अश्वावयवेषूपासनम्162  |
| 3. कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं167                                       |
| 3.10 तैत्तरीय यजुर्ब्राह्मणे काठके प्रथमः प्रञ्नः( सावित्रचयनम्)167                          |
| 3.10.1 अनुवाकं 1 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते167 |
| 3.10.2 अनुवाकं 2 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते170 |
| 3.10.3 अनुवाकं 3 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते171 |
|  |

| 3.10.4 अनुवाकं 4 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते   | 172 |
|---|-----|
| 3.10.5 अनुवाकं 5 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते   | 173 |
| 3.10.6 अनुवाकं 6 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते   | 174 |
| 3.10.7 अनुवाकं 7 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते   | 174 |
| 3.10.8 अनुवाकं 8 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते   | 175 |
| 3.10.9 अनुवाकं 9 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते   | 178 |
| 3.10.10 अनुवाकं 10 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते    | 184 |
| 3.10.11 अनुवाकं 11 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं<br>स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते | 188 |
| 3. कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं   | 194 |
| 3.11 तैत्तरीय यजुर्बाह्मणे काठके द्वितीयः प्रञ्नः नाचिकेतचयनम्                              | 194 |
| 3.11.1 अनुवाकं 1 –इष्टकोपधानमन्त्राः  | 194 |
| 3.11.2 अनुवाकं 2 -चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति                                       | 203 |
| 3.11.3 अनुवाकं 3 –चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति                                       | 205 |
| 3.11.4 अनुवाकं 4 –चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति                                       | 206 |
|   |     |

|    | 3.11.5 अनुवाकं 5 -चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति2                              | <u>2</u> 06  |
|----|---|--------------|
|    | 3.11.6 अनुवाकं 6 –उपस्थानम्2  | 208          |
|    | 3.11.7 अनुवाकं ७ -नाचिकेतब्राह्मणं तत्र आग्निदेवतोपासनम् 2                          | 210          |
|    | 3.11.8 अनुवाकं 8 -नाचिकेतोपाख्यानम्2  | 212          |
|    | 3.11.9 अनुवाकं 9 -चयनप्रयोगः2   | 216          |
|    | 3.11.10 अनुवाकं 10 –तत्प्रशंसा2   | 220          |
| 3. | कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं                                    | .224         |
| 3  | 3.12 तैत्तरीय यजुर्ब्राह्मणे काठके तृतीयः प्रञ्नः चातुर्होत्रचयनं वैश्वसृजचयनं च .2 | <u> 2</u> 24 |
|    | 3.12.1 अनुवाकं 1 –वैश्वसृजचयनाङ्गभूताः दिवश्श्येनय इष्टयः2                          | <u> 2</u> 24 |
|    | 3.12.2 अनुवाकं 2 –तासां ब्राह्मणम्2   | 225          |
|    | 3.12.3 अनुवाकं 3 –उपाघा नामेष्टयः2  | 231          |
|    | 3.12.4 अनुवाकं 4 –तासां ब्राह्मणम्2   | 233          |
|    | 3.12.5 अनुवाकं 5 –चातुर्होत्रचयनम्2   | 238          |
|    | 3.12.6 अनुवाकं 6 –वैश्वसृजचयनम्2  | <u>2</u> 43  |
|    | 3.12.7 अनुवाकं ७ –वैश्वसृजचयनम्2  | <u>2</u> 45  |
|    | 3.12.8 अनुवाकं 8 –वैश्वसृजचयनम्2  | 247          |
|    | 3.12.9 अनुवाकं 9 – ब्रह्मा सदस्यासीनो वौश्वसृजान् व्याचष्टे2                        | 249          |
| Aŗ | opendix (of expansions)   | .254         |
|    | =======================================   |              |

ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः

श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

# 3.कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं

3.7 तैतिरीय ब्राह्मणे तृतियाष्टके सप्तमः प्रपाठकः

अच्छिद्रं काण्डं प्रायश्चित्तेन मन्त्रैश्च यज्ञच्छिद्रपूरणादच्छिद्रमुच्यते

3.7.1 अनुवाकं 1 – दर्शपूर्णमासेष्टिविषयाणि कानि चित्प्रायश्चित्तानि

T.B.3.7.1.1

सर्वान्. वा एषीऽग्नौ कामान् प्रवेशयति ।
यो-ऽग्नीनन्वाधाय व्रतमुपैति ।
स यदनिष्ट्वा प्रयायात् । अकामप्रीता एनं कामा नानु प्रयायुः ।
अतेजा अवीर्यः स्यात् । स जुहुयात् । तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम ।
विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । अग्ने कामाय येमिर् इति ।
वा विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । तुभ्यं कामाय येमिर् इति ।
वा विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । तुभ्यं कामाय येमिर् इति ।
विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । तुभ्यं कामाय येमिर् इति ।
विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । तुभ्यं कामाय येमिर् इति ।

T.B.3.7.1.2

न कामप्रीता एनं कामा अनुप्रयान्ति । तेजस्वी वीर्यावान् भवति ॥ । । । । । । । । । । । । । सन्ति वीर्यावान् भवति ॥ सन्ति विर्वा एषा यज्ञस्य । यो – ऽग्नीनन्वाधाय व्रतमुपैति । । । । । । । । । । । । । । स यदुद्वायति । विच्छित्ति – रेवास्य सा ॥ तं प्राञ्चमुद्धृत्य ।

```
मनसोपतिष्ठेत । मनो वै प्रजापतिः ।
प्राजापत्यो यज्ञः । 2 (10)
T.B.3.7.1.3
मनसैव यज्ञ एं सन्तनोति । भूरित्याह । भूतो वै प्रजापतिः ।
भूतिमेवोपैति ॥ वि वा एष इन्द्रियेण वीर्येणर्द्ध्यते ।
यस्या-हिताग्ने-रग्निरपक्षायति । यावच्छम्यया प्रविद्ध्येत् ।
यदि तावदपक्षायेत् । तुं संभरेत् । इदं त एकं पर उत एकं । 3 (10)
T.B.3.7.1.4
तृतीयेन ज्योतिषा सम्वैंशस्व । सम्वैशनस्तनुवै चारुरेधि ।
प्रिये देवानां परमे जनित्र इति । ब्रह्मणैवैन प् संभरति ।
सैव ततः प्रायश्चित्तिः । यदि परस्त-रामपक्षायेत् ।
अनु प्रयायावस्येत् । सो एव ततः प्रायश्चित्तिः ॥
ओषधीर्वा एतस्य पशून् पयः प्रविशति ।
यस्य हविषे वथ्सा अपाकृता धयन्ति । 4 (10)
T.B.3.7.1.5
तान्. यदुह्यात् । यातयाम्ना हिवषा यजेत । यन्न दुह्यात् ।
यज्ञपरु-रन्तरियात् । वायव्यां यवागूं निर्वपेत् ।
```

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
```

```
वायुर्वे पयसः प्रदापयिता । स एवास्मै पयः प्रदापयित ।
पयो वा ओषधयः । पयः पयः ।
पयसैवास्मै पयोऽवरुन्धे । 5 (10)
T.B.3.7.1.6
अथोत्तरस्मै हिवषे वथ्सानपा कुर्यात् । सैव ततः प्रायश्चित्तिः ॥
अन्यतरान्. वा एष देवान् भागधेयेन व्यर्द्धयति ।
ये यजमानस्य सायं गृहमा-गच्छन्ति ।
यस्य सायं दुग्ध ए हविरार्ति – मार्च्छति ।
इन्द्राय व्रीहीन्नि-रुप्यो-पवसेत् । पयो वा ओषधयः ।
पय एवारभ्य गृहीत्वो-पवसति ।
यत्प्रातः स्यात् । तच्छृतं कुर्यात् । 6 (10)
T.B.3.7.1.7
अथेतर ऐन्द्रः पुरोडाञ्चाः स्यात् । इन्द्रिये एवास्मै समीची दधाति ।
पयो वा ओषधयः । पयः पयः । पयसैवास्मै पयोऽवरुन्धे ।
अथोत्तरस्मै हिवषे वथ्सानपा कुर्यात् । सैव ततः प्रायश्चित्तिः ॥
उभयान्. वा एष देवान् भागधेयेन व्यर्द्धयति ।
ये यजमानस्य सायं च प्रातश्च गृहमा-गच्छन्ति ।
```

```
यस्योभयं हविरार्ति – मार्च्छति । ७ (10)
```

T.B.3.7.1.8

पेन्द्रं पञ्चशराव—मोदनं निर्वपेत् । अग्निं देवतानां प्रथमं यजेत् ।
अग्निमुखा एव देवताः प्रीणाति । अग्निं वा अन्वन्या देवताः ।
इन्द्रमन्वन्याः । ता एवोभयीः प्रीणाति । पयो वा ओषधयः ।
पयः पयः । पयसैवास्मै पयोऽवरुन्थे ।

अथोत्तरस्मै हिवषे वथ्सानपा कुर्यात् । 8 (10)

T.B.3.7.1.9

सैव ततः प्रायश्चितिः ॥ अर्द्धो वा एतस्य यज्ञस्य मीयते ।

यस्य व्रत्येऽहुन् पत्यना-लम्भुका भवति । तामपुरुद्ध्य यजेत ।

सर्वेणैव यज्ञेन यजते । तामिष्ट्वो-पह्नयेत । अमूहमस्मि ।

सा त्वं । द्यौरहं । पृथिवी त्वं () । सामाहं । ऋक्त्वं ।

तावेहि संभवाव । सह रेतो दधावहै । पुण्से पुत्राय वेत्तवै ।

ग्यस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्यायेति ।

अर्द्ध एवैनामु-पह्नयते ।

सैव ततः प्रायश्चितिः ॥ 9 (18)

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
```

(दधाति – यज्ञ – उत एकं – धयन्ति – रुन्धे – कुर्या – दार्छ – ---, - - - , त्यपाकुर्यात् – पृथिवी त्वमष्टौ च) (A1)

# Special Korvai (सर्वान्. वि वै यदि परस्तरामोषधीरन् यतरानुभयानधीं वै )

# 3.7.2 अनुवाकं 2 -अग्निहोत्रसाम्नाय्यसाधारणानि प्रायश्चित्तानि

<u>3.7.2.1</u>

यिद्धः षण्णेन जुहुयात् । अप्रजा अपशुर्यजमानः स्यात् ।

यदनायतने निनयेत् । अनायतन-स्स्यात् ।

प्राजापत्ययर्चा वल्मीक-वपायाम-वनयेत् । प्राजापत्यो वै वल्मीकः।

यज्ञः प्रजापतिः । प्रजापतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति ।

भूरित्याह । भूतो वै प्रजापतिः । 10 (10)

T.B.3.7.2.2

भूतिमेवोपैति । तत् कृत्वा । अन्यां दुग्ध्वा पुनर्. होत्व्यं ।
सैव ततः प्रायश्चित्तिः ॥ यत्कीटा-वपन्नेन जुहुयात् ।
॥ अप्रजा अपशु-र्यजमानः स्यात् । यदनायतने निनयेत् ।
अनायतनः स्यात् ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

#### T.B.3.7.2.3

तत्कृत्वा । अन्यां दुग्ध्वा पुनर्. होतव्यं । सैव ततः प्रायश्चित्तिः ॥

यदववृष्टेन जुहुयात् । अपरूप-मस्यात्म-ञ्जायेत ।

विलासो वा स्यादर्.शसो वा । यत् प्रत्येयात् । यज्ञं विच्छिन्द्यात् ।

स जुहुयात् । मित्रो जनान् कल्पयित प्रजानन्त् । 12 (10)

### T.B.3.7.2.4

मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्यां । मित्रः कृष्टीर-निमिषा ऽभिचष्टे ।
सत्याय हव्यं घृतव-ज्जुहोतेति । मित्रेणैवैनत् कल्पयति ।
तत्कृत्वा । अन्यां दुग्ध्वा पुनर्.होत्व्यं । सैव ततः प्रायश्चित्तः ॥
यत् पूर्वस्या-माहुत्या इत्याय-मृत्तरा-ऽऽहुतिः स्कन्देत् ।
द्विपाद्धिः प्रशुभि-र्यजमानो व्यृद्ध्येत ।
यदुत्तरया ऽभिजुहुयात् । 13 (10)

```
T.B.3.7.2.5
चतुष्पाद्धिः पशुभि-र्यजमानो व्यृद्ध्येत ।
यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गुह्या नामानि ।
तत्र हव्यानि गामयेति वानस्पत्य-यर्चा समिध-माधाय ।
तूष्णीमेव पुन-र्जुहुयात्।
वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्तां चानार्तां चाहुती विदाधार । तत्कृत्वा ।
अन्यां दुग्ध्वा पुनर्. होतव्यं । सैव ततः प्रायश्चित्तिः ॥
यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देत् ।
अद्ध्वर्यवे च यजमानाय चाक 🛡 स्यात् । 14 (10)
T.B.3.7.2.6
यद् दक्षिणा । ब्रह्मणे च यजमानाय चाक 🛡 स्यात् ।
ा । । । ।
यदुदङ् । अग्नीधे च पशुभ्यश्च यजमानाय चाक⊌ स्यात् ।
यदभिजुहुयात् । रुद्रीऽस्य पशून् घातुकः स्यात् ।
यन्नाभि जुहुयात् । अशान्तः प्रह्नियेत ॥ 15 (10)
```

#### T.B.3.7.2.7

स्रुवस्य बुद्ध्नेनाभि निदद्ध्यात् ।

मा तमो मा यज्ञस्तमन्मा यजमान-स्तमत् ।

नमस्ते अस्त्वायते । नमो रुद्र परायते । नमो यत्र निषीदसि ।

अमुं मा हिण्सीरमुं मा हिण्सीरिति येन स्कन्देत् ॥ तं प्रहरेत् ।

सहस्रशङ्को वृषभो जातवेदाः । स्तोमपृष्ठो घृतवान्-थ्सुप्रतीकः ।

मा नो हासीन्मेत्थितो (हासीर्मेत्थितो) नेत्त्वा जहाम () ।

गोपोषं नो वीरपोषं च यच्छेति ।

बह्मणैवैनं प्रहरित । सैव ततः प्रायश्चित्तः ॥ 16 (13)

(वै प्रजापितः – स्थापयित – प्रजानन् – निभेजुहुयाथ् – स्याद् –

श्चियेत – जहाम त्रिणि च) (A2)

### Special Korvai

## 3.7.3 <u>अनुवाकं 3 –मुख्याग्न्यसंभवेऽनुकल्पाः होमाधाराः</u>

T.B.3.7.3.1 वि वा एष इन्द्रियेण वीर्येणर्द्ध्यते । यस्या-हिताग्ने-रग्नि-र्मथ्यमानो न जायते । यत्रान्यं पश्येत् । ा । ॥ तत आहत्य होतव्यं । ॥ अग्ना–वेवास्या–ग्निहोत्तर्ं हुतं भवति॥

यद्यन्यं न विन्देत् । अजाया 🗸 होत्वयं । आग्नेयी वा एषा । ्यदजा । अग्ना-वेवास्या-ग्निहोत्र ्र हुतं भवति । **17 (10)** 

#### T.B.3.7.3.2

अजस्य तु नाञ्ञीयात् । यदजस्या–ञ्ञीयात् । ्यामेवाग्ना–वाहुतिं जुहुयात् । तामद्यात् । तस्मादजस्य नाञ्यं ॥ यद्यजां न विन्देत् । ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्वयं । एष वा अग्नि वैश्वानरः । यद्ब्राह्मणः । अग्ना-वेवास्या-ग्निहोत्रण् हुतं भवति । **18 (10)** 

#### T.B.3.7.3.3

—— । ॥ ॥ । ब्राह्मणं तु वसत्यै नापरुन्ध्यात् । यद्ब्राह्मणं वसत्या अपरुन्ध्यात् । । । । यस्मिन्ने – वाग्नावाहुतिं जुहुयात् । तं भागधेयेन व्यर्द्धयेत् ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
तस्माद् ब्राह्मणो वसत्यै नापरुद्ध्यः ॥ यदि ब्राह्मणं न विन्देत् ।
। ॥
दर्भस्तंबे होतव्यं । अग्निवान्. वै दर्भस्तंबः ।
॥
अग्नावे-वास्या-ग्निहोत्रण् हुतं भवति ।
दर्भा ७स्तु नाद्ध्यासीत । 19 (10)
यद्दर्भानद्ध्यासीत । यामेवाग्ना-वाहुतिं जुहुयात् । तामद्ध्यासीत ।
ा । । । ।
तस्माद् दर्भा नाद्ध्यासितव्याः ॥ यदि दर्भान्न विन्देत् ।
। ॥ । ॥ । ॥
अफ्स् होतव्यं । आपो वै सर्वा देवताः ।
देवतास्वे वास्या-ग्निहोत्र ् हुतं भवति ।
आपस्तु न परिचक्षीत । यदापः परिचक्षीत । 20 (10)
T.B.3.7.3.5
या मेवाफ्स्वाहुं तिं जुहुयात् । तां परिचक्षीत ।
तस्मादापो न परिचक्ष्याः ॥
मेद्ध्या च वा एतस्यामेद्ध्या च तनुवौ सर्सृज्येते।
यस्या-हिताग्ने-रन्यैरग्निभि-रग्नयः सर्सृज्यन्ते ।
अग्नये विविचये पुरोडाश-मष्टाकपालं निर्वपेत् ।
```

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
मेदध्यां चैवास्या-मेद्ध्यां च तनुवौ व्यावर्तयति ॥
्। । । । । । । । । अग्नये व्रतपतये पुरोडाश-मष्टाकपालं निर्वपेत् ।
अग्निमेव व्रतपति स्वेन भागधेये – नोपधावति ।
स एवैनं वृतमा-लंभयति ॥ 21 (10)
T.B.3.7.3.6
गर्भ ७ स्रवन्तमगदमकः । अग्नि-रिन्द्र-स्त्वष्टा बृहस्पतिः ।
पृथिव्या-मवचुश्चो-तैतत् । नाभि-प्राप्नोति निर्.ऋतिं पराचैः ॥
रेतो वा एतद्वाजिन-माहिताग्नेः । यदग्निहोत्रं । तद्यथ्सवेत् ।
रेतोऽस्य वाजिन् स्रवेत् । गर्भ स्रवन्तम-गदमक-रित्याह ।
रेत एवास्मिन् वाजिनं दधाति ॥ 22 (10)
T.B.3.7.3.7
अग्निरित्याह । अग्निर्वै रेतोधाः । रेत एव तद्दधाति । इन्द्र इत्याह ।
इन्द्रिय-मेवास्मिन्-दधाति । त्वष्टेत्याह ।
त्वष्टा वै पशूनां मिथुनाना 🗸 रूपकृत्।
रूपमेव पशुषु दधाति । बृहस्पतिरित्याह ।
ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः ()। ब्रह्मणैवास्मै प्रजाः प्रजनयति॥
पृथिव्या-मवचुश्चोतैत-दित्याह । अस्या-मेवैनत् प्रतिष्ठापयति ॥
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अच्छिद्रं - (TB 3.7)
```

नाभि प्राप्नोति निर्.ऋतिं पराचैरित्याह ।

रक्षसामपहत्यै ॥ 23 (15)

(अजाऽग्नावेवास्याग्निहोत्रण् हुतं भवति – भव – त्यासीत –

परिचक्षीत – लम्भयति – दधाति – देवानां बृहस्पतिः

पञ्च च) (A3)

#### Special Korvai

(वि वै यद् यन्यमजायां ब्राह्मणस्य दर्भस्तम्बेऽफ्सु होतव्यम्)

## 3.7.4 <u>अनुवाकं 4 –ऐष्टिकयाजमानमन्त्राः</u>

## T.B.3.7.4.1

याः पुरस्तात् प्रस्नवन्ति । उपरिष्टाथ् सर्वतश्च याः ।
ताभी रिश्मपवित्राभिः । श्रद्धां यज्ञमारभे ॥ देवा गातुविदः ।
गातुं यज्ञाय विन्दत । मनसस्पितना देवेन ।
ना ।
वाताद्-यज्ञः प्रयुज्यतां ॥ तृतीयस्यै दिवः ।
गायत्रिया सोम आभृतः । 24 (10)

```
T.B.3.7.4.2
सोमपीथाय संनयितुं । वकल-मन्तरमाददे ॥
आपों देवीः शुद्धाः स्थं । इमा पात्राणि शुन्धत ।
उपातङ्क्याय देवानां । पर्णवल्कमुत शुन्धत ॥
पयो गृहेषु पयो अध्नियासु ।
। ।
पयो वथ्सेषु पय इन्द्राय हिवषे ध्रियस्व ।
गायत्री पर्णवल्केन । पयः सोमं करोत्विमं ॥ 25 (10)
T.B.3.7.4.3
अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मयो भूः । य उद्यन्तमा रोहति सूर्यमहे ।
आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमं । श्वो यज्ञायं रमतां देवताभ्यः ॥
॥ । । । । ॥ । । वसून् रुद्रानादित्यान् । इन्द्रेण सह देवताः । ताः पूर्वः परिगृह्णामि ।
स्व आयतने मनीषया ॥ इमामूर्जं पञ्चदर्शीं ये प्रविष्टाः ।
तान्देवान् परिगृह्णामि पूर्वः । 26 (10)
T.B.3.7.4.4
अग्निर्. हेव्यवाडिह तानावहतु । पौर्णमास्र 🗸 हविरिदमेषां मयि ।
आमावास्य 🤄 हविरिदमेषां मयि ॥ अन्तराऽग्नी पश्चवः ।
देवस एं सदमागमञ् । तान् पूर्वः परिगृह्णामि ।
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अच्छिद्रं - (TB 3.7)
स्व आयतेने मनीषया ॥ इह प्रजा विश्वरूपा रमन्तां ।
अग्निं गृहपतिमभि सम्वसानाः।
ताः पूर्वः परिगृह्णामि । 27 (10)
अग्निं गृहपतिमभि सम्वसानाः । तान् पूर्वः परिगृह्णामि ।
स्व आयतने मनीषया ॥ अयं पितृणामग्निः ।
अवाड्ढव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिगृह्णामि।
अविषं नः पितुं करत् ॥ अजस्रं त्वार् सभापालाः । 28 (10)
विजयभाग्ण समिन्धतां। अग्ने दीदाय मे सभ्य।
विजित्यै शरदः शतं ॥ अन्नमावसथीयं । अभिहराणि शरदः शतं ।
॥ ।
आवसथे श्रियं मन्त्रं । अहिर्बुद्ध्नियो नियच्छतु ॥
इदमह-मग्नि ज्येष्ठेभ्यः । वसुभ्यो यज्ञं प्रब्रवीमि ।
```

इदमह-मिन्द्रं ज्येष्ठेभ्यः । 29 (10)

```
T.B.3.7.4.7
रुद्रेभ्यो यज्ञं प्रब्रवीमि । इदमहं वरुण-ज्येष्ठेभ्यः ।
आदित्येभ्यो यज्ञं प्रब्रवीमि ॥ पयस्वती-रोषधयः ।
पयस्वद्वीरुधां पयः । अपां पयसो यत्पयः ।
तेन मामिन्द्र सर्सृज ॥ अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि ।
तच्छकेयं तन्मे राद्ध्यतां । वायो व्रतपत आदित्य व्रतपते । 30 (10)
T.B.3.7.4.8
व्रतानां व्रतपते व्रतं चरिष्यामि । तच्छकेयं तन्मे राद्ध्यतां ॥
इमां प्राचीमुदीचीं । इषमूर्जमभि स्न ४ स्कृतां । बहुपर्णामशुष्काग्रां ।
हरामि पशुपामहं ॥ यत्कृष्णों रूपं कृत्वा । प्राविशस्तवं वनस्पतीन् ।
ततस्त्वामेकविं्शतिधा । संभरामि सुसंभृता ॥ 31 (10)
T.B.3.7.4.9
त्रीन् परिधी ७ स्तिस्रः समिधः । यज्ञायुरनुसंचरान् ।
उपवेषं मेक्षणं धृष्टिं । संभरामि सुसंभृता ॥
या जाता ओषधयः । देवेभ्य स्त्रियुगं पुरा । तासां पर्व राद्ध्यासं ।
परिस्तर-माहरत्रं ॥ अपां मेद्ध्यं यज्ञियं ।
सदेव ् शिवमस्तु मे । 32 (10)
```

```
T.B.3.7.4.10
आच्छेता वो मा रिषं । जीवानि शरदः शतं ॥
अपरिमितानां परिमिताः । संनह्ये सुकृतायकं ।
॥
एनो मा निगां कतमच्च नाहं।
। । । ।
पुनरुत्थाय बहुला भवन्तु ॥ सकृदाच्छिन्नं बर्.हिरूर्णामृदु ।
स्योनं पितृभ्यस्त्वा भराम्यहं । अस्मिन् थ्सीदन्तु मे पितरः सोम्याः ।
पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह ॥ 33 (10)
T.B.3.7.4.11
त्रिवृत् पलाशे दर्भः । इयान् प्रादेश संमितः ।
यज्ञे पवित्रं पोतृतमं । पयो हव्यं करोतु मे ॥ इमौ प्राणापानौ ।
यज्ञस्याङ्गानि सर्वशः । आप्याययन्तौ संचरतां । पवित्रे हव्यशोधने ॥
पवित्रे स्थो वैष्णवी । वायुर्वां मनसा पुनातु ॥ 34 (10)
T.B.3.7.4.12
। । । । । । । । । । अयं प्राणश्चापानश्च । यजमान-मिपगच्छतां । यज्ञे ह्यभूतां पोतारौ ।
पवित्रे हव्यशोधने ॥ त्वया वेदिः विविदुः पृथिवीं ।
त्वया यज्ञो जायते विश्वदानिः । अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान् ।
```

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
त्वया होता सन्तनोत्यर्द्धमासान् ॥ त्रयस्त्रि एशोऽसि तन्तूनां ।
पवित्रेण सहागहि । 35 (10)
T.B.3.7.4.13
शिवेयण् रज्जुंरभिधानीं । अघ्निया-मुपसेवतां ॥ अप्रस्रण्साय यज्ञस्य ।
उखे उपदधाम्यहं । पशुभिः संनीतं बिभृतां । इन्द्राय शृतं दधि ॥
उपवेषोऽसि यज्ञाय । त्वां परिवेष-मधारयन्न् । इन्द्राय हविः कृण्वन्तः ।
शिवः शग्मो भवासि नः ॥ 36 (10)
T.B.3.7.4.14
अमृन्मयं देवपात्रं । यज्ञस्यायुषि प्रयुज्यतां । तिरः पवित्रमतिनीताः ।
आपो धारय माऽतिगुः ॥ देवेन सवित्रोत्पूताः ।
वसोः सूर्यस्य रिमभिः। गां दोहपवित्रे रज्जुं।
सर्वा पात्राणि शुन्धत ॥ एता आचरन्ति मधुमदुहानाः ।
प्रजावती-र्यशसो विश्वरूपाः। 37 (10)
T.B.3.7.4.15
बह्वी भवन्तीरुप जायमानाः । इह व इन्द्रों रमयतु गावः ॥
पूषा स्थं ॥ अयक्ष्मा वः प्रजया सर्स्जामि ।
रायस्पोषेण बहुला भवन्तीः । ऊर्जं पयः पिन्वमाना घृतं च ।
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

T.B.3.7.4.16

उथ्सं दुहन्ति कलशं चतुर्बिलं। इडां देवीं मधुमती ् सुवर्विदं।

तिदन्द्राग्नी जिन्वत् सूनृतावत्। तद् – यजमान – ममृतत्वे दधातु॥

कामधुक्षः प्रणो ब्रूहि। इन्द्राय हिविरिन्द्रियं॥ अमूं यस्यां देवानां।

मनुष्याणां पयो हितं॥ बहु दुग्धीन्द्राय देवेभ्यः।

हव्य – माप्यायतां पुनः। 39 (10)

T.B.3.7.4.17

वथ्सेभ्यो मनुष्येभ्यः । पुनर्दोहाय कल्पतां ॥ यज्ञस्य सन्ततिरसि । यज्ञस्य त्वा सन्तितिरसि ॥ अदस्तमिस् विष्णवे त्वा । यज्ञायापि दधाम्यहं । अद्भिरिकेन पात्रेण । याः पूताः परिशेरते ॥ अयं पयः सोमं कृत्वा । स्वां योनि–मिपगच्छतु । 40 (10)

T.B.3.7.4.18

पर्णवल्कः पवित्रं । सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः ॥ इमौ पर्णं च दर्भं च ।

पर्णवल्कः पवित्रं । सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः ॥ इमौ पर्णं च दर्भं च ।

देवाना ए हव्यशोधनौ । प्रातर्वेषाय गोपाय । विष्णो हव्य ए हि रक्षिसि ॥

उभावग्नी उपस्तृणते । देवता उपवसन्तु मे ।

### तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)

अहं ग्राम्या-नुपवसामि ।

— ।

मह्यं गोपतये पुरान् ( ) ॥ 41 (10)

[आभृत – इमं – गृह्णामि पूर्व – स्ताः पुर्वः परिगृह्णामि –

सभापाला – इन्द्रज्येष्ठेभ्य-आदित्य व्रतपते-सुसंभ्रुता – मे –

सह – पुनातु – गिह – नो – विश्वरूपा – दथातु – पुनर् –

गच्छतु – पशुन् ( ) ] (A4)

### Special Korvai

याः पुरस्तादिमामूर्जमिह प्रजा इह प्रावोऽयं पितृणाम्गिः

## 3.7.5 <u>अनुवाकं 5 –ऐष्टिकयाजमानमन्त्राः</u>

आप्यायतां घृतयोनिः । अग्निर्. हव्या-ऽनुमन्यतां ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अच्छिद्रं - (TB 3.7)
```

खमङ्क्ष्व त्वचमङ्क्ष्व । सुरूपं त्वां वसुविदं । पुशूनां तेजसा । अग्नये जुष्ट-मभिघारयामि ॥ स्योनं ते सदनं करोमि । 43 (10)

T.B.3.7.5.3

घृतस्य धारया सुशेवं कल्पयामि ॥ तस्मिन्-थ्सीदामृते प्रतितिष्ठ । वृीहीणां मेध सुमनस्यमानः ॥ आर्द्रः प्रथस्नुर् भुवनस्य गोपाः । शृत उथ्स्नाति जिनता मतीनां ॥ यस्त आत्मा पशुषु प्रविष्टः । देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे ।

आत्मन्वान् थ्सोम घृतवान्. हि भूत्वा ।

— । । । ॥

देवान् गच्छ सुवर्विन्द यजमानाय महां ॥

इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रमीत् ॥ 44 (10)

T.B.3.7.5.4

देवाः पितरः पितरो देवाः । योऽहमस्मि स सन्. यजे ।

यस्यास्मि न तमन्तरेमि । स्वं म इष्ट्र स्वं दृत्तं ।

स्वं पूर्त स्व श्रान्तं ।

स्व ् हुतं । तस्य मेऽग्नि–रुपद्रष्टा । वायुरुपश्रोता ।

आदित्यो–ऽनुख्याता । द्यौः पिता । 45 (10)

```
T.B.3.7.5.5
पृथिवी माता । प्रजापति र्बन्धुः । य एवास्मि स सन्. यजे ॥
मा भेर्मा सम् विकथा मा त्वा हि ्सिषं। मा ते तेजो – ऽपक्रमीत्।
भरतमुद्धरे मनुषिञ्च । अवदानानि ते प्रत्यवदास्यामि ।
नमस्ते अस्तु मा मा हि एसीः ॥ यदवदानानि तेऽवद्यन् ।
विलोमाकार्.षमात्मनः । 46 (10)
T.B.3.7.5.6
आज्येन प्रत्यनज्म्येनत् । तत्त आप्यायतां पुनः ॥ अज्यायो यवमात्रात् ।
आव्याधात् कृत्यतामिदं । मा रूरुपाम यज्ञस्य ।
राुद्ध⊌ स्विष्टमिद्ध्ं हविः ॥ मनुना दृष्टां घृतपदीं । मित्रावरुणसमीरितां ।
दक्षिणार्दधादसंभिन्दन्न् । अवद्या-म्येकतो मुखां ॥ 47 (10)
T.B.3.7.5.7
इंडे भागं जुषस्व नः । जिन्व गा जिन्वार्वतः । तस्यास्ते भक्षिवाणः
स्याम । सर्वात्मानः सर्वगणाः ॥ ब्रद्ध्न पिन्वस्व ।
ददतो मे मा क्षायि । कुर्वतो मे मोपदसत् । दिशां क्लप्तिरसि ।
दिशों में कल्पन्तां। कल्पन्तां में दिशः। 48 (10)
```

```
T.B.3.7.5.8
दैवीश्च मानुषिश्च । अहोरात्रे में कल्पेतां । अर्द्धमासा में कल्पन्तां ।
मासा मे कल्पन्तां । ऋतवो मे कल्पन्तां । सम्वथ्सरो मे कल्पतां ।
क्लप्तिरसि कल्पतां मे ॥ आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः ।
चतुभ्यो अमृतेभ्यः ।
इदं भूतस्या-द्ध्यक्षेभ्यः । 49 (10)
T.B.3.7.5.9
विधेम हविषा वयं । भजतां भागी भागं । माऽभागो-ऽभक्त ।
।
चत्रष्पादव । दिवो वृष्टिमेरय । ब्राह्मणाना-मिद्र्ं हिवः । 50 (10)
T.B.3.7.5.10
सोम्याना रं सोमपीथिनां । निर्भक्तो ब्राह्मणः । नेहा-ब्राह्मणस्यास्ति ॥
समङ्कां बर्.हिर्. हिवषा घृतेन । समादित्यै र्वसुभिः सं मरुद्धिः ।
सिमिन्द्रेण विश्वेभि र्देवेभिरङ्कां । दिव्यं नभो गच्छतु यथ् स्वाहा ॥
इन्द्राणी वा विधवा भूयासं । अदितिरिव सुपुत्रा ।
अस्थूरि त्वा गार्.हपत्य । 51 (10)
```

```
T.B.3.7.5.11
उपनिषदे सुप्रजास्त्वाय ॥ सं पत्नी पत्या सुकृतेन गच्छतां ।
यज्ञस्य युक्तौ धुर्यावभूतां । संजानानौ विजहता-मरातीः ।
दिवि ज्योतिरज-रमारभेतां ॥ दश ते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः ।
ताः प्रीणातु यजमानो घृतेन । नारिष्ठयोः प्रशिषमीडमानः ।
देवानां दैव्येऽपि यजमानो-ऽमृतो-ऽभूत् ॥
यं वां देवा अकल्पयन्न् । 52 (10)
T.B.3.7.5.12
ऊर्जो भाग ुं शंतक्रतू । एतद्वां तेन प्रीणानि ।
तेन तृप्यतम्हहौ ॥ अहं देवाना<del>ण्</del> सुकृतामस्मि लोके ।
ममेदिमिष्टं न मिथु र्भवाति । अहं नारिष्ठा-वनुयजामि विद्वान् ।
ा । ।
यदाभ्या-मिन्द्रो अदधा-द्भागधेयं ॥ अदारसृद्भवत देव सोम ।
अस्मिन्. यज्ञे मरुतो मृडता नः।
मा नो विददभि भामो अशस्तिः। 53 (10)
T.B.3.7.5.13
मा नो विदद्-वृजना द्वेष्या या ॥ ऋषभं वाजिनं वयं ।
पूर्णमासं यजामहे । स नो दोहता ए सुवीर्य ।
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

रायस्पोषं एं सहस्रिणं । प्राणायं सुराधंसे । पूर्णमासाय स्वाहा ॥ अमावास्या सुभगा सुज्ञेवा । धेनुरिव भूय आप्यायमाना । सा नो दोहता एं सुवीर्यं ()। रायस्पोष एं सहस्रिणं। अपानाय सुराधसे । अमावास्यायै स्वाहा ॥ अभिस्तृणीहि परिधेहि वेदिं । जामिं मा हि एंसीरमुया शयांना । होतृषदना हरिताः सुवर्णाः । निष्का इमे यजमानस्य ब्रद्ध्ने ॥ 54 (17) (अभीत्वर्थे – करोमि – क्रमीत् – पिता – ऽऽत्मनं – एकतोमुखां – मे दिशो – ऽध्यक्षेभ्यो – हिवर् – गार्.हपत्या – कल्पय – न्नशस्तः – सा नो दोहताएं सुवीर्यण् सप्त च) (A5)

# 3.7.6 अनुवाकं 6 –ऐष्टिकयाजमानमन्त्राः

#### T.B.3.7.6.1

परिस्तृणीत परिधत्ताग्निं । परिहितो - ऽग्नि र्यजमानं भुनकु । अपार् रस ओषधीनार् सुवर्णः । । ॥ । निष्का इमे यजमानस्य सन्तु कामदुघाः । अमुत्रामुष्मिन् लोके ॥ भूपते भुवनपते । महतो भूतस्य पते । ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे ॥

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
```

```
अहं भूपतिरहं भुवनपतिः।
अहं महतो भूतस्य पतिः । 55 (10)
T.B.3.7.6.2
देवेन सवित्रा प्रसूत आर्त्विज्यं करिष्यामि । देव सवितरेतं त्वा वृणते ।
बृहस्पतिं दैव्यं ब्रह्माणं । तदहं मनसे प्रब्रवीमि । मनो गायत्रियै ।
गायत्री त्रिष्टुभे । त्रिष्टुब् जगत्यै । जगत्यनुष्टुभे ।
अनुष्टुक् पङ्क्त्यै । पङ्किः प्रजापतये । 56 (10)
T.B.3.7.6.3
प्रजापति र्विश्वेभ्यो देवेभ्यः । विश्वे देवा बृहस्पतये ।
बृहस्पति ब्रह्मणे । ब्रह्म भूर्भुवः सुवः । बृहस्पति र्देवानां ब्रह्मा ।
अहं मनुष्याणां । बृहस्पते यज्ञं गोपाय ॥ इदं तस्मै हर्म्यं करोमि ।
यो वो देवाश्चरति ब्रह्मचर्यं । मेधावी दिक्षु मनसा तपस्वी । 57 (10)
T.B.3.7.6.4
अन्तर्दूतश्चरित मानुषीषु ॥ चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः ।
घृतप्रतीका भुवनस्य मद्ध्ये । मर्मृज्यमाना महते सौभगाय ।
ा । । । । ।
मह्यं धुक्ष्व यजमानाय कामान् ॥ भूमि र्भूत्वा महिमानं पुपोष ।
ततो देवी वर्द्धयते पया ्सि । यज्ञिया यज्ञं वैवचयन्ति शंच ।
```

ओषधीराप इह शक्वरीश्च ॥

। । ।

यो मा हदा मनसा यश्च वाचा । 58 (10)

पो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टि देवाः । यः श्रुतेन हृदयेनेष्णता च ।

तस्येन्द्र वजेण शिरिश्छनि ॥ ऊर्णामृदु प्रथमान स्योनं ।

देवेभ्यो जुष्ट सदनाय बर्हः । सुवर्गे लोके यजमान हि धेहि ।

मां नाकस्य पृष्ठे प्रमे (परमे) व्योमञ्ग ॥

चतुः शिखण्डा युवितः सुपेशाः । घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते ।

सा स्तीर्यमाणा महते सौभगाय । 59 (10)

सा में धुक्ष्व यजमानाय कामान् । शिवा च में श्राग्मा चैधि ।
स्योना च में सुषदा चैधि । ऊर्जस्वती च में पयस्वती चैधि ।
इषमूर्जं में पिन्वस्व । ब्रह्म तेजों में पिन्वस्व । क्ष्रुत्रमोंजों में पिन्वस्व ।
विश्ं पुष्टिं में पिन्वस्व । आयुर्ह्माद्यं में पिन्वस्व ।
प्रजां पशून् में पिन्वस्व ॥ 60 (10)

```
T.B.3.7.6.7
```

अस्मिन्. यज्ञ उप भूय इन्नु में । अविक्षोभाय परिधीन्दंधामि । थर्ता धरुणो धरीयान् । अग्नि र्हेषा ्सि निरितो नुदातै ॥ विच्छिनद्मि विधृतीभ्या ए सपलान् । जातान् भ्रातृव्यान्. ये च जनिष्यमाणाः । विशो यन्त्राभ्यां विधमाम्येनान् । अह ७ स्वानां – मुत्तमोऽसानि देवाः । विशो यन्त्रे नुदमाने अरातिं । विश्वं पाप्मानममतिं दुर्मरायुं ॥ 61 (10) T.B.3.7.6.8 सीदन्ती देवी सुंकृतस्य लोके । धृतीं स्थो विधृती स्वधृती । प्राणान्मयि धारयतं । प्रजां मयि धारयतं । पशून्मयि धारयतं ॥ अयं प्रस्तर उभयस्य धर्ता । धर्ता प्रयाजाना-मुतानूयाजानां । स दाधार समिधों विश्वरूपाः । तस्मिन्थ् स्नुचो अद्ध्यासादयामि ॥ आरोह पथो जुंह देवयानान् । 62 (10) T.B.3.7.6.9 यत्रर्षयः प्रथमजा ये पुराणाः । हिरण्यपक्षाऽजिरा संभृताङ्गा ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
अहमुत्तरो भूयासं । अधरे मथ्सपताः ॥
यो मां वाचा मनसा दुर्मरायुः।
हृदा-ऽरातीया-दभिदास-दग्ने । 63 (10)
T.B.3.7.6.10
इदमस्य चित्तमधरं धुवायाः । अहमुत्तरो भूयासं । अधरे मथ्सपत्नाः ॥
ऋषभोऽसि शाक्वरः । घृताचीना एं सूनुः ।
प्रियेण नाम्ना प्रिये सदसि सीद ॥ स्योनो मे सीद सुषदः पृथिव्यां ।
प्रथिय प्रजया पशुभिः सुवर्गे लोके । दिवि सीद पृथिव्या-मन्तरिक्षे ।
अहमुत्तरो भूयासं । 64 (10)
अधरे मथ्सपताः ॥ इय७ स्थाली घृतस्य पूर्णा ।
। । । । – – । ।
अच्छिन्नपयाः रातधार उथ्सः । मारुतेन रार्मणा दैव्येन ॥
यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः ।
सर्वतो मां भूतं भविष्य-च्छ्रयतां। शतं मे सन्त्वाशिषः।
सहस्रं मे सन्तु सूनृताः । इरावतीः पशुमतीः ।
```

प्रजापतिरसि सर्वतः श्रितः । 65 (10)

T.B.3.7.6.12

शृतं मयि श्रयतां ॥ यत् पृथिवी-मचरत्तत्-प्रविष्टं । 66 (10)

T.B.3.7.6.13

येनासिञ्चद् बल्मिन्द्रे प्रजापितः । इदं तच्छुकं मधु वाजिनीवत् ।

येनो-परिष्टादिधनोन्-महेन्द्रं । दिध मां धिनोतु ॥

अयं वैदः पृथिवी-मन्विवन्दत् । गुहा सतीं गहने गह्नरेषु ।

स विन्दतु यजमानाय लोकं । अच्छिद्रं यज्ञं भूरिकर्मा करोतु ॥

अयं यज्ञः समसदद्धविष्मान् । ऋचा साम्ना यजुषा देवतािभः । 67 (10)

T.B.3.7.6.14

तेन लोकान्थ् सूर्यवतो जयेम । इन्द्रस्य सुख्य-ममृतत्व-मञ्चां ॥ यो नः कनीय इह कामयातै । अस्मिन्. यूज्ञे यजमानाय मह्यं । अप तमिन्द्राग्नी भुवनान्नुदेतां । अहं प्रजां वीरवतीं विदेय ॥

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

अग्ने वाजजित् । वाजं त्वा सरिष्यन्तं । । ॥ । — ॥ वाजं जेष्यन्तं । वाजिनं वाजजितं । 68 (10)

#### T.B.3.7.6.15

वाजजित्यायै संमार्जिम । अग्निमन्ना – दमन्नाद्याय ॥ उपहूतो द्यौः पिता । उप मां द्यौः पिता ह्रयतां । अग्नि – राग्नीद्धात् । आयुषे वर्चसे । जीवात्वै पुण्याय । उपहूता पृथिवी माता । जीवात्वै पुण्याय । उपहूता पृथिवी माता । उप मां माता पृथिवी ह्रयतां । अग्नि – राग्नीद्धात् । 69 (10)

T.B.3.7.6.16

आयुषे वर्चसे । जीवात्वै पुण्याय ॥ मनो ज्योति र्जुषतामाज्यं ।

विच्छिन्नं यज्ञ ए सिममं दधातु । बृहस्पित-स्तनुतामिमं नः ।

विश्वे देवा इह मादयन्तां ॥ यं ते अग्न आवृश्चामि ।

अहं वा क्षिपितश्चरन्न् । पूजां च तस्य मूलं च ।

नीचैर्देवा निवृश्चत । 70 (10)

\_\_\_\_\_ T.B.3.7.6.17

अग्ने यो नोऽभिदासति । समानो यश्च निष्ट्यः । इद्ध्मस्येव प्रक्षायतः ।
मा तस्योच्छेषि किंचन । यो मां द्वेष्टि जातवेदः ।
यं चाहं द्वेष्मि यश्च मां । सर्वा ७ स्तानग्ने संदह ।

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
```

```
या ७ श्वाहं द्वेष्मि ये च मां ॥ अग्ने वाजजित्।
वाजं त्वा ससृवार्ः । 71 (10)
T.B.3.7.6.18
। ।
अग्नि–मन्नाद–मन्नाद्याय ॥ वेदि र्बर्.हिः शृत्र ्हिवः ।
इद्ध्मः परिधयः सुचः । आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः ।
याज्याश्च वषट्काराः । सं मे संनतयो नमन्तां ।
इद्ध्मसं-नहने हुते ॥ 72 (10)
T.B.3.7.6.19
दिवः खीलोऽवततः । पृथिव्या अद्ध्युत्थितः । तेना सहस्रकाण्डेन ।
द्विषन्त ं शोचयामिस । द्विषन्मे बहु शोचतु ।
ा
ओषधे मो अहुं शुचं ॥ यज्ञ नमस्ते यज्ञ । नमो नमश्च ते यज्ञ ।
शिवेन में संतिष्ठस्व । स्योनेन में संतिष्ठस्व । 73 (10)
T.B.3.7.6.20
सुभूतेन मे संतिष्ठस्व । ब्रह्मवर्चसेन मे संतिष्ठस्व ।
```

यज्ञस्यर्खिमनु संतिष्ठस्व । उप ते यज्ञ नमः । उप ते नमः ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अच्छिद्रं - (TB 3.7)
```

उप ते नमः ॥ त्रिष्फली क्रियमाणानां । यो न्यङ्गो अवशिष्यते । । ॥ – । रक्षसां भागधेयं । आपस्तत् प्रवहतादितः ॥ 74 (10)

T.B.3.7.6.21

उल्रुखले मुसले यच्च शूर्प । आशिश्लेष दृषदि यत्कपाले । अवप्रुषो विप्रुषः सम्यजामि । विश्वे देवा ह्विरिदं जुषन्तां । यज्ञे या विप्रुषः सन्ति बहीः ।

निम्रोचन्नधरान् कृधि ॥ 75 (10)

T.B.3.7.6.22

उद्यन्नद्य वि नो भज। पिता पुत्रेभ्यो यथा। दीर्घायुत्वस्य हेशिषे।

तस्य नो देहि सूर्य॥ उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोहन्नुत्तरां दिवं।

हद्रोगं मम सूर्य। हिरमाणं च नाशय॥ शुकेषु मे हिरमाणं।

रोपणाकासु दद्ध्मिसा। 76 (10)

T.B.3.7.6.23

अथो हारिद्रवेषु मे । हरिमाणं निदद्ध्मसि ॥ उदगादय-मादित्यः । विश्वेन सहसा सह । द्विषन्तं मम रन्धयन्न् । मो अहं द्विषतो रधं ॥

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
```

यो नः शपादशंपतः । यश्च नः शपतः शपात् । उषाश्च तस्मै निम्रुक्च । सर्वं पाप्ण समूहतां ( ) ॥ 77 (10)

3.7.7 <u>अनुवाकं 7 –सोमाङ्ग.भूतेषु मन्त्रेषु –दीक्षामारभ्याग्नीषोमयि पशुपर्यन्ते</u> प्रयोगे शेषभता मन्त्राः

T.B.3.7.7.1

सक्षेदं पश्य । विधर्तरिदं पश्य । नाकेदं पश्य । रमितः पनिष्ठा । ऋतं वर्षिष्ठं । अमृता यान्याहुः । सूर्यो वरिष्ठो अक्षभिर्विभाति ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे ॥ दीक्षाऽसि तपसो योनिः ।
तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः । 79 (10)
T.B.3.7.7.2
ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः । क्षत्रमस्यृतस्य योनिः ।
न्नः
ऋतमसि भूरारभे । श्रद्धां मनसा । दीक्षां तपसा ।
विश्वस्य भ्वनस्याधिपत्नीं । सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु ॥
वातं प्राणं मनसाऽन्वारभामहे । प्रजापतिं यो भुवनस्य गोपाः ।
स नो मृत्योस्त्रायतां पात्व एहंसः । 80 (10)
T.B.3.7.7.3
ज्योग्जीवा जरामशीमहि ॥ इन्द्र शाक्वर गायत्रीं प्रपद्ये ।
तां ते युनज्मि । इन्द्रं शाक्वर त्रिष्टुभं प्रपद्ये । तां ते युनज्मि ।
इन्द्र शाक्वर जगतीं प्रपद्ये । तां ते युनज्मि ।
इन्द्र शाक्वरानुष्टुभं प्रपद्ये । तां ते युनज्मि ।
इन्द्रं शाक्वर पङ्किं प्रपद्ये । 81 (10)
T.B.3.7.7.4
तां ते युनज्मि ॥ आऽहं दीक्षामरुह-मृतस्य पत्नीं ।
गायत्रेण छन्दंसा ब्रह्मणा च । ऋत्र ्सत्येऽधायि । सत्यमृतेऽधायि ।
```

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
ऋतं च मे सत्यं चाभूतां । ज्योतिरभूव ए सुवरगमं ।
सुवर्गं लोकं नाकस्य पृष्ठं । ब्रद्ध्नस्य विष्टपमगमं ॥
पृथिवी दीक्षा। 82 (10)
T.B.3.7.7.5
तयाऽग्नि दीक्षया दीक्षितः । ययाऽग्नि दीक्षया दीक्षितः ।
तया त्वा दीक्षया दीक्षयामि । अन्तरिक्षं दीक्षा ।
तया वायु र्दीक्षया दीक्षितः । यया वायु र्दीक्षया दीक्षितः ।
तया त्वा दीक्षया दीक्षयामि । द्यौ दीक्षा ।
तयाऽऽदित्यो दीक्षया दीक्षितः ।
ययाऽऽदित्यो दीक्षया दीक्षितः । 83 (10)
T.B.3.7.7.6
तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि । दिशों दीक्षा ।
तया चन्द्रमा दीक्षया दीक्षितः।
यया चन्द्रमा दीक्षया दीक्षितः । तया त्वा दीक्षया दीक्षयामि ।
आपो दीक्षा । तया वरुणो राजा दीक्षया दीक्षितः ।
यया वरुणो राजा दीक्षया दीक्षितः ।
तया त्वा दीक्षया दीक्षयामि । ओषधयो दीक्षा । 84 (10)
```

```
T.B.3.7.7.7
तया सोमो राजा दीक्षया दीक्षितः। यया सोमो राजा दीक्षया दीक्षितः ।
तया त्वा दीक्षया दीक्षयामि । वाग् दीक्षा ।
तया प्राणो दीक्षया दीक्षितः । यया प्राणो दीक्षया दीक्षितः ।
तया त्वा दीक्षया दीक्षयामि । पृथिवी त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षतां ।
अन्तरिक्षं त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षतां ।
द्यौस्त्वा दीक्षमाणमन् दीक्षतां । 85 (10)
T.B.3.7.7.8
दिशस्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां । आपस्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां ।
ओषधयस्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां । वाक्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षतां ।
ऋचस्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां । सामानि त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां ।
यजू एषि त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां । अहश्च रात्रिश्च । कृषिश्च वृष्टिश्च ।
त्विषिश्चा-पंचितिश्च । 86 (10)
T.B.3.7.7.9
जापश्चौषधयश्च । ऊर्क्च सूनृता च । तास्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षन्तां ॥
स्वे दक्षे दक्षंपितेह सीद । देवाना एं सुम्नो महते रणाय ।
स्वासस्थ-स्तनुवा सम्वंविशस्व । पितेवैधि सूनव आ स्त्रोवः ।
```

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
```

```
शिवो मां शिवमाविश ।
सत्यं मं आत्मा । श्रद्धा मे ऽक्षितिः । 87 (10)
T.B.3.7.7.10
तपों मे प्रतिष्ठा । सवितृ-प्रसूता मा दिशों दीक्षयन्तु । सत्यमस्मि ॥
अहं त्वदस्मि मदसि त्वमेतत् । ममासि योनिस्तव योनिरस्मि ।
ममैव सन्वह हव्यान्यग्ने । पुत्रः पित्रे लोककृ-ज्ञातवेदः ॥
आजुह्वानः सुप्रतीकः पुरस्तात् । अग्ने स्वां योनिमासीद साद्ध्या ।
अस्मिन्थ् सधस्थे अद्ध्युत्तरस्मिन् । 88 (10)
T.B.3.7.7.11
विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥ एकमिषे विष्णुस्त्वा – उन्वेतु ।
द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वेतु । त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वा-ऽन्वेतु ।
चत्वारि मायों भवाय विष्णुस्त्वा-उन्वेतु ।
पञ्च पशुभ्यो विष्णुस्त्वा-ऽन्वेतु । षड्रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा-ऽन्वेतु ।
सप्त सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वा-ऽन्वेतु ॥
सर्खायः सप्तपदा अभूम । सख्यं ते गमेयं । 89 (10)
```

```
T.B.3.7.7.12
सख्याते मा योषं । सख्यान्मे मा योष्ठाः ॥ साऽसि सुब्रह्मण्ये ।
ा । । । । । । । । । तस्यास्ते पृथिवी पादः । साऽसि सुब्रह्मण्ये । तस्यास्तेऽन्तरिक्षं पादः ।
। । । ।
साऽसि सुब्रह्मण्ये । तस्यास्ते द्यौः पादः । साऽसि सुब्रह्मण्ये ।
तस्यास्ते दिशः पादः । 90 (10)
T.B.3.7.7.13
परो रजास्ते पञ्चमः पादः । सा न इषमूर्जं धुक्ष्व ।
। । ।
तेज इन्द्रियं । ब्रह्मवर्चस-मन्नाद्यं ॥ विमिमे त्वा पयस्वतीं ।
्।
देवानां धेनु ् सुदुघा-मनप-स्फुरन्तीं । इन्द्रः सोमं पिबतु ।
क्षेमो अस्तु नः ॥ इमां नराः कृणुत वेदिमेत्य ।
वस्मती 💇 रुद्रवती – मादित्यवतीं । 91 (10)
T.B.3.7.7.14
वर्ष्मन्दिवः । नाभा पृथिव्याः । यथाऽयं यजमानो न रिष्येत् ।
।
देवस्य सवितुः सवे ॥ चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः ।
्
घृतप्रतीका भुवनस्य मद्ध्ये । तस्यां ्र सुपर्णाविधि यौ निविष्टौ ।
तयो र्देवानामधि भागधेयं ॥ अप जन्यं भयं नुद ।
```

```
अप चक्राणि वर्तय ( )। गृह एं सोमस्य गच्छतं ॥
न वा उवेतन्प्रियसे (उवेतन्प्रियसेन) रिष्यसि ।
देवा ण् इदेषि पथिभिः सुगेभिः । यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः ।
तत्र त्वा देवः सविता दधातु ॥ 92 (15)
(ब्रह्मणो योनि – रज्हसः – पङ्किं प्रपद्ये – दीक्षा – ययोऽऽदित्यो
तीक्षया दीक्षित – स्तया त्वा दीक्षया दीक्षयाम्योषधयो दीक्षा –
। ।
द्यौस्त्वा दीक्षमाणमनु दीक्षता – मपचितिश्चा – क्षिति – रुत्तरस्मिन्
– गमेयं – दिशः पाद – आदित्यवतीं – ँवर्तय पञ्च च) (A7)
3.7.8 अनुवाकं 8 - पश्विषया अच्छिद्रमन्त्राः
T.B.3.7.8.1
यदस्य पारे रजसः । शुक्रं ज्योति-रजायत । तन्नः पर्.षदति द्विषः ।
अग्ने वैश्वानर स्वाहा ॥ यस्माद्भीषा-ऽवाशिष्ठाः ।
ततों नो अभयं कृधि।
प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड । नमो रुद्राय मीढुषे ॥
यस्माद्भीषा न्यषदः । ततो नो अभयं कृधि । 93 (10)
```

```
T.B.3.7.8.2
प्रजाभ्यः सर्वोभ्यो मृड । नमो रुद्राय मीढुषे ॥
उदुस्र तिष्ठ प्रतितिष्ठ मा रिषः । मेमं यज्ञं यजमानं च रीरिषः ।
सुवर्गे लोके यजमान एं हि धेहि। ज्ञां न एधि द्विपदे ज्ञां चतुष्पदे॥
यस्माद्भीषाऽवेपिष्ठाः पलायिष्ठाः समज्ञास्थाः ।
ततो नो अभयं कृधि।
प्रजाभ्यः सर्वोभ्यो मृड । नमो रुद्राय मीढुषे ॥ 94 (10)
T.B.3.7.8.3
य इदमकः । तस्मै नमः । तस्मै स्वाहा ॥
" न वा उ वेतन्प्रियसे{1}"। "आशानां त्वा{2}" "विश्वा आशाः{3}"॥
यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौ ।
इन्द्राग्नी चेतनस्य च। हुताहुतस्य तृप्यतं। अहुतस्य हुतस्य च।
हुतस्य चाहुंतस्य च ()। अहुंतस्य हुतस्य च।
इन्द्राग्नी अस्य सोमस्य । वीतं पिंबतं जुषेथां ॥
मा यजमानं तमो विदत् । मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः ।
मा यः सोममिमं पिबात् । संध्सृष्टमुभयं कृतं ॥ 95 (17)
```

www.vedavms.in

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
```

(कृधि - मीढुषे - ऽहुतस्य च सप्त च) (A8)

#### 3.7.9 अनुवाकं 9 - उपांश्वभिषवा मन्त्राः

### T.B.3.7.9.1

#### T.B.3.7.9.2

युक्ताः स्थ वहत ॥ देवा ग्रावाण इन्दुरिन्द्र इत्यवादिषुः ।

एन्द्रमचुच्यवुः प्रमस्याः प्रावतः । आऽस्माथ् सधस्थात् ।

ओरोरन्तरिक्षात् । आ सुभूतमसुषवुः । ब्रह्मवर्चसं म आऽसुषवुः ।

समरे रक्षा ७ स्यवधिषुः । अपहतं ब्रह्मज्यस्य ॥

— । । ।

वाक्च त्वा मनश्च श्रिणीतां । 97 (10)

#### T.B.3.7.9.3

प्राणश्च त्वाऽपानश्च श्रीणीतां । चक्षुश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीतां । - । । । । दक्षश्च त्वा बलं च श्रीणीतां । ओजश्च त्वा सहश्च श्रीणीतां ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अच्छिद्रं - (TB 3.7)
आयुश्च त्वा जरा च श्रीणीतां । आत्मा च त्वा तनूश्च श्रीणीतां ।
शृतोऽसि शृतं कृतः । शृतायं त्वा शृतेभ्यस्त्वा ॥
यमिन्द्रमाहु र्वरुणं यमाहुः । यं मित्रमाहुर् यमु सत्यमाहुः । 98 (10)
T.B.3.7.9.4
यो देवानां देवतमस्तपोजाः । तस्मै त्वा तेभ्यस्त्वा ॥
मयि त्यदिन्द्रियं महत् । मयि दक्षो मयि क्रतुः ।
। । । । । । । । । । मिये धायि सुवीयं । त्रिशुग्धर्मो विभातु मे । आकूत्या मनसा सह ।
विराजा ज्योतिषा सह । यज्ञेन पयसा सह ।
तस्य दोहंमशीमहि । 99 (10)
T.B.3.7.9.5
तस्य सुम्नमंशीमहि । तस्य भक्षमंशीमहि ।
वाग्जुषाणा सोमस्य तृप्यतु ॥ "मित्रो जनान् (4)" "प्र स मित्र (5)" ॥
यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति । य आविवेश भुवनानि विश्वा ।
```

प्रजापतिः प्रजयां सम्विदानः ।

- ।

- ।

त्रीणि ज्योती पृषि सचते स षोड्शी ॥ एष ब्रह्मा य ऋत्वियः ।

- ।

इन्द्रो नाम श्रुतो गणे ॥ 100 (10)

T.B.3.7.9.6 प्र ते महे विदर्थे ऽश्र एसिष ए हरी । य ऋत्वियः प्र ते वन्वे । वनुषो हर्यतं मदं ॥ इन्द्रो नाम घृतं न यः । हरिभिश्चारु सेचते । श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु । हरिवर्पसंगिरः ॥ इन्द्राधिपते-ऽधिपतिस्त्वं देवानामसि । अधिपतिं मां । आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु ॥ 101 (10) T.B.3.7.9.7 ा । । । । । इन्द्रश्च सम्राड् वरुणश्च राजा। तौ ते भक्षं चक्रतुरग्र एतं। तयोरन् भक्षं भक्षयामि । वाग्जुषाणा सोमस्य तृप्यतु ॥ प्रजापति र्विश्वकर्मा । तस्य मनो देवं यज्ञेन राद्ध्यासं । अर्थे गा अस्य जहितः । अवसानपते-ऽवसानं मे विन्द ॥ नमो रुद्राय वास्तोष्पतये । आयने विद्रवणे । 102 (10) T.B.3.7.9.8 उद्याने यत्परायणे । आवर्तने विवर्तने । यो गोपायति तर्ः हुवे ॥ यान्यपामित्या-न्यप्रतीता-न्यस्मि । यमस्य बलिना चरामि । इहैव सन्तः प्रति तद्यातयामः । जीवा जीवेभ्यो निहराम एनत् ॥

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

अनृणा अस्मिन्न-नृणाः परस्मिन्न् । तृतीये लोके अनृणाः स्याम । --- । ॥ ये देवयाना उत पितृयाणाः । 103 (10)

T.B.3.7.9.9

सर्वान् पथो अनृणा आक्षीयेम ॥ इदमू नु श्रेयो-ऽवसान-मागन्म ।

शिवे नो द्यावापृथिवी उभे इमे । गोमब्दन-वदश्चव-दूर्जस्वत् ।

स्वीरा वीरैरनु संचरेम ॥ अर्कः पवित्रण् रजसो विमानः ।

पुनाति देवानां भुवनानि विश्वा । द्यावापृथिवी पयसा सम्विदाने ।

पुनाति देवानां भुवनानि विश्वा । सुव ज्योति र्यशो महत् ।

पुनाति देवानां भुवनानि विश्वा । सुव ज्योति र्यशो महत् ।

अशीमिह गाधमुत प्रतिष्ठां ॥ 104 (13)

(चातयत - श्रीणीताण् - सत्यमाहु - रशीमिह - गणे - कुरु -

3.7.10 अनुवाकं 10 -सौमिकप्रायाश्चित्तमन्त्राः

T.B.3.7.10.1

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
```

वामदेव्ये श्रयस्व स्वाहा – उन्तरिक्षे । बृहति श्रयस्व स्वाहा दिवि । बृहता त्वोपस्तभ्नोमि ॥ आ त्वा ददे यशसे वीर्याय च । बृहता त्वोपस्तभ्नोमि ॥ आ त्वा ददे यशसे वीर्याय च । अस्मास्व – ि वा पूर्य दधाथेन्द्रियं पयः ॥ वा प्राप्त विद्या यूर्य दधाथेन्द्रियं पयः ॥ वा प्राप्त विद्या विद्या

#### T.B.3.7.10.2

दैव्यः केतु र्विश्वं भुवन-माविवेश । स नः पाह्यरिष्ट्यै स्वाहा ॥
अनु मा सर्वो यूजो-ऽयमेतु । विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः ।
आप्रिय रुछन्दा एसि निविदो यजू एषि । अस्यै पृथिव्ये यद्यज्ञियं ॥
प्रजापते र्वर्तिनमनु वर्तस्व । अनु वीरैरनु राद्ध्याम गोभिः ।
अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टैः । अनु प्रजया-ऽन्विन्द्रियेण । 106 (10)

# T.B.3.7.10.3

देवा नो यज्ञ-मृजुधा नयन्तु ॥ प्रति क्ष्रित्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे ।
प्रत्यश्चेषु प्रतितिष्ठामि गोषु । प्रति प्रजायां प्रति तिष्ठामि भव्ये ।
विश्वमन्याऽभि वावृधे । तदन्यस्या-मधिश्रितं । दिवे च विश्वकर्मणे ।
पृथिव्यै चाकरं नमः ॥ अस्कान्द्यौः पृथिवीं ।
अस्कानृषभो युवा गाः । 107 (10)

```
T.B.3.7.10.4
स्कन्नेमा विश्वा भुवना । स्कन्नो यज्ञः प्रजनयतु ।
अस्कानजनि प्राजनि । आ स्कन्नाज्जायते वृषा ।
स्कन्नात् प्रजनिषीमहि ॥ ये देवा येषामिदं भागधेयं बभूव ।
्॥ । । । । । । येषां प्रयाजा उतानूयाजाः । इन्द्रज्येष्ठेभ्यो वरुणराजभ्यः ।
अग्निहोत्भ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥ उत त्या नो दिवा मतिः । 108 (10)
T.B.3.7.10.5
अदितिरूत्या–ऽऽगमत् । सा शन्ताची मयस्करत् । अप स्निधः ॥
उत त्या दैव्या भिषजा । शं नस्करतो अश्विना । यूयाता–मस्मद्रपः ।
अप स्रिधः ॥ शमग्नि–रग्निभिस्करत् । शं नस्तपतु सूर्यः ।
शं वातो वात्वरपाः । 109 (10)
T.B.3.7.10.6
अप स्रिधः ॥ तदित्पदं न विचिकेत विद्वान् ।
यन्मृतः पुनरप्येति जीवान् । त्रिवृद्यद् भुवनस्य रथवृत् ।
जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्॥
प्रत्यस्मै पिपीषते । विश्वानि विदुषे भर । अरं गमाय जग्मवे ।
अपश्चाद्दध्वने नरे (अपश्चाद्दध्वने नरे) ॥ इन्दुरिन्दुम-वांगात् ( )।
```

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
इन्दोरिन्द्रो-ऽपात् । तस्यं त इन्दविन्द्रं-पीतस्य मधुमतः ।
उपहृतस्योपहृतो भक्षयामि ॥ 110 (13)
(उदर्.ष – इन्द्रियेण – गा – मति – ररपा – अगात्रीणि च) (A10)
3.7.11 अनुवाकं 11 -दर्शपूर्णमासप्रायश्चित्तमन्त्राः
T.B.3.7.11.1
ा । ।
ब्रह्म प्रतिष्ठा मनसो ब्रह्म वाचः । ब्रह्म यज्ञाना⊍् हविषा–माज्यस्य ।
अतिरिक्तं कर्मणो यच्च हीनं । यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कल्पयन्न् ।
स्वाहाकृता-ऽऽहुतिरेतु देवान् ॥ आश्रावितमत्याश्रावितं ।
वषट्कृत-मत्यनू कं च यज्ञे । अतिरिक्तं कर्मणो यच्च हीनं ।
यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कल्पयन् ।
स्वाहाकृता-ऽऽहुतिरेतु देवान् ॥ 111 (10)
T.B.3.7.11.2
यद्यो देवा अतिपादयानि । वाचा चित्प्रयतं देव हेर्डनं ।
अरायो अस्मार् अभि-दुच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्-मरुतस्त-न्निधेतन ॥
ततं म आपस्तदुं तायते (तायते पुनः)।
स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते ।
अय ए समुद्र उत विश्वभेषजः।
```

```
स्वाहा-कृतस्य समुतृष्णुत र्भुवः ॥
"उद्वयं तमसस्परि{6}"। "उदु त्यं{7}" "चित्रं{8}"। 112 (10)
T.B.3.7.11.3
"इमं में वरुण{9}" "तत्त्वा यामि{10}"। "त्वं नो अग्ने{11}"
"स त्वं नो अग्ने{12}"। "त्वमंग्ने अयाऽसि{13}" "प्रजापते{14}"॥
इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि । मैषां नु गादपरो अर्द्धमेतं ।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीः । तिरो मृत्युं दंधतां पर्वतेन ॥
इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिंगष्टेभ्यः स्वाहा ।
भेषजं दुरिष्ट्यै स्वाहा निष्कृत्यै स्वाहा ।
T.B.3.7.11.4
ततो नो अभयं कृधि। मघवञ्छिग्धि तव तन्न ऊतये।
वि द्विषो वि मृधों जिह ॥ स्वस्तिदा विशस्पतिः ।
वृत्रहा विमृधो वशी । वृषेन्द्रः पुर एतु नः ।
स्वस्तिदा अभयं करः ॥ आभि गींभिं र्यदतो न ऊनं । 114 (10)
```

```
T.B.3.7.11.5
आप्यायय हरिवो वर्द्धमानः । यदा स्तोतृभ्यो महि गोत्रा रुजासि ।
भूयिष्ठभाजो अध ते स्याम ॥ अनाज्ञातं यदाज्ञातं ।
यज्ञस्य क्रियते मिथु । अग्ने तदस्य कल्पय ।
त्व ए हि वेत्थं यथातथं ॥ पुरुष संमितो यज्ञः ।
यज्ञः पुरुष संमितः । अग्ने तदस्य कल्पय ( ) ।
त्व 🗸 हि वेत्थं यथातथं ॥ यत् पाकत्रा मनसा दीनदक्षा न ।
यज्ञस्य मन्वते मर्तासः । अग्निष्टब्होता कृतुविद्विजानन्न् ।
यजिष्ठो देवा एं ऋतु शो यजाति ॥ 115 (15)
(देवा = - श्चित्रं - तनूभ्यः स्वाहो - नं - पुरुषसंमितोऽग्ने तदस्य
कल्पय पञ्च च) (A11)
3.7.12 अनुवाकं 12 -अग्निष्टोमादौ यजमानजप्या मन्त्रविशेषाः
T.B.3.7.12.1
यदेवा देवहेडनं । देवांसश्चकृमा वयं । आदित्या-स्तस्मान्मा मुञ्चत ।
ऋतस्यर्तेन मामुत ॥ देवां जीवनकाम्या यत् । वाचाऽनृतमूदिम ।
अग्निर्मा तस्मादेनसः । गार्.हंपत्यः प्रमुञ्चतु । दुरिता यानि चकृम ।
करोतु मामने नसं ॥ 116 (10)
```

```
T.B.3.7.12.2
ऋतेन द्यावापृथिवी । ऋतेन त्व ए सरस्वति । ऋतान्मा मुञ्चता एहसः ।
यदन्य कृतमारिम ॥ सजातश्र्सादुत वा जामिश्र्सात् ।
ज्यायसः राण्सांदुत वा कनीयसः । अनाज्ञातं देवकृतं ँयदेनः ।
तस्मात्त्वमस्मा-ञ्जातवेदो मुमुग्धि ॥ यद्वाचा यन्मनसा ।
बाहुभ्या-मूरुभ्या-मष्ठीवद्भ्यां । 117 (10)
T.B.3.7.12.3
शिश्ञै र्यदनृतं चकुमा वयं । अग्निर्मा तस्मादेनसः ॥
यद्धस्ताभ्यां चकर किल्बिषाणि । अक्षाणां वग्नुमुप जिघ्नमानः ।
दूरेपश्या च राष्ट्रभृच्च । तान्यफ्सरसा–वनुदत्ता–मृणानि ॥
अदीव्यन्नृणं यदहं चकार । यद्वाऽदास्यन्थ् संजगारा जनेभ्यः ।
अग्निर्मा तस्मादेनसः ॥ यन्मयि माता गर्भे सति । 118 (10)
T.B.3.7.12.4
एनश्चकार यत्पिता । अग्निर्मा तस्मादेनसः ॥ यदा पिपेष मातरं पितरं ।
पुत्रः प्रमुदितो धयत्र् । अहि एसितौ पितरौ मया तत् ।
तदंग्ने अनृणो भवामि ॥ यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां ।
यन्मातरं पितरं वा जिहि एसिम।
```

अग्निर्मा तस्मादेनसः ॥ यदाशसा निशसा यत्पराशसा । 119 (10) T.B.3.7.12.5 यदेनश्च कृमा नूतनं यत्पुराणं । अग्निर्मा तस्मादेनसः ॥ अतिक्रामामि दुरितं यदेनः । जहामि रिप्रं परमे सधस्थे । यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः । तमारोहामि सुकृतां नु लोकं ॥ त्रिते देवा अमृजतै-तदेनः । त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे । ततों मा यदि किंचिदानशे । अग्निर्मा तस्मादेनसः । 120 (10) T.B.3.7.12.6 गार्.हंपत्यः प्रमुञ्चतु । दुरिता यानि चकृम । करोतु मामनेनसं ॥ दिवि जाता अफ्सु जाताः । या जाता ओषधीभ्यः । अथो या अग्निजा आपः । ता नः शुन्धन्तु शुन्धनीः ॥ यदापो नक्तं दूरितं चराम । यद्वा दिवा नूतनं यत्पुराणं । हिरण्य-वर्णास्तत उत्पुनीत नः ( ) ॥ "इमं में वरुण{15}" "तत्त्वां यामि{16}"। "त्वं नों अग्ने{17}" "स त्वं नों अग्ने{18}"। "त्वमग्ने अयाऽसि{19}" ॥ 121 (13) *(अनेनस - मष्ठीवद्भ्यार्-सति* – पराशसाऽऽनशे-ऽग्निर्मा तस्मादेनसः-पुनीत नस्त्रीणि च) (A12)

# तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)

Special Korvai
(यद् देवा गार्.हपत्यो यद्धस्ताभ्यां यन्मिय माता यदापिपेष
यदन्तरिक्षां यदाशसाऽतिक्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता अफ्सु
जाता यदाप इमं मे वरुणा तत्त्वा यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो
अग्ने त्वमग्ने अयाऽसि)

# 3.7.13 अनुवाकं 13 -अवभृथे कर्मणि ऋजीषप्रोक्षणमन्त्राः

#### T.B.3.7.13.1

यते ग्राव् गणां चिच्छिदुः सोम राजन्न् ।

प्रियाण्यङ्गानि स्विधिता परूर्षि । तथ्संध्रथ् स्वाज्येनोत वर्द्धयस्व ।

अनागसो अधमिथ्संक्षयेम ॥ यते ग्रावा बाहुच्युतो अचुच्यवुः ।

नरो यते दुदुहु दक्षिणेन । तत्त आप्यायतां तते ।

निष्ट्यायतां देव सोम ॥ यते त्वचं बिभिदुर्यच्च योनिं ।

यदास्थानात् प्रच्युतो वेनसि तमना । 122 (10)

## T.B.3.7.13.2

त्वया तथ्सोम गुप्तमस्तु नः । सा नः संधा-ऽसत्परमे व्योमन्न् ॥
अहाच्छरीरं पयसा समेत्य । अन्योऽन्यो भवति वर्णो अस्य ।

तस्मिन् वयमुपहूतास्तव स्मः । आ नो भज सदिस विश्वरूपे ॥

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
न्चक्षाः सोमं उत शुश्रुगस्तु । मा नो विहासीद्गरं आवृणानः ।
अनागा-स्तनुवो वावृधानः । आ नो रूपं वहतु जायमानः ॥ 123 (10)
T.B.3.7.13.3
उपक्षरन्ति जुह्वो घृतेन । प्रियाण्यङ्गानि तव वर्द्धयन्तीः ।
तस्मै ते सोम नम इद्वषट्च । उप मा राजन्थ् सुकृते ह्वयस्व ॥
सं प्राणापानाभ्या ए समु चक्षुषा त्वं।
स७ श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्न् ।
यत्त आस्थित ए रामु तत्ते अस्तु । जानीतान्नः संगमने पथीनां ॥
एतं जानीतात्परमे व्योमन्न् । वृकाः सधस्था विद रूपमस्य । 124 (10)
T.B.3.7.13.4
यदागच्छात् पथिभि र्देवयानैः । इष्टापूर्ते कृणुता-दाविरस्मै ॥
अरिष्टो राजन्नगदः परेहि । नमस्ते अस्तु चक्षसे रघूयते ।
नाकमारोह सह यजमानेन । सूर्यं गच्छतात्परमे व्योमन्न् ॥
अभूद्देवः सविता वन्द्यो नु नः । इदानीमह्न उपवाच्यो नृभिः ।
वि यो रत्ना भजति मानवेभ्यः । श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दधत् ( ) ॥
```

उप नो मित्रावरुणा-विहावतं । अन्वादीद्ध्या-थामिह नः सखाया ।

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अच्छिद्रं - (TB 3.7)
आदित्यानां प्रसितिर्. हेतिः । उग्रा शतापाष्ठा घविषा परिणो वृणक्तु ॥
"आप्यायस्व{20}" "सं ते{21}" ॥ 125 (15)
(त्मना – जायमानो – ऽस्य – दधत् पञ्च च) (८१३)
3.7.14 अनुवाकं 14 -अवभृथे कर्मणि सेचनादिमन्त्राः
T.B.3.7.14.1
। । । ॥ । । । यद्दिदीक्षे मनसा यच्च वाचा । यद्दा प्राणैश्चक्षुषा यच्च श्रोत्रेण ।
यद्रेतसा मिथुनेना-प्यात्मना ।
अद्भ्यो लोका दिधरे (दिधरे) तेज इन्द्रियं ।
शुक्रा दीक्षायै तपसो विमोचनीः।
आपो विमोक्त्री मीय तेज इन्द्रियं ॥
यदृचा साम्ना यजुषा । पशूनां चर्मन्. हविषा दिदीक्षे ।
यच्छन्दोभि-रोषधीभि-र्वनस्पतौ ।
अद्भ्यो लोका दिधरे (दिधरे) तेज इन्द्रियं । 126 (10)
T.B.3.7.14.2
शुक्रा दीक्षायै तपसो विमोचनीः।
```

www.vedavms.in

आपो विमोक्त्री मीय तेज इन्द्रियं ॥

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
येन ब्रह्म येन क्षत्रं । येनेन्द्राग्नी प्रजापितः सोमो वरुणो येन राजा ।
विश्वे देवा ऋषयो येन प्राणाः।
अद्भ्यो लोका दंधिरे (दंधिरे) तेज इन्द्रियं ।
शुक्रा दीक्षायै तपसो विमोचनीः।
आपों विमोक्त्री मीय तेज इन्द्रियं ॥
अपां पुष्पमस्यो-षधीना ए रसः । सोमस्य प्रियं धाम । 127 (10)
T.B.3.7.14.3
्। । । । । सोमस्य प्रियं धाम । इन्द्रस्य प्रियतम् हिवः स्वाहा ।
अपां पुष्पमस्यो-षधीना ए रसः । सोमस्य प्रियं धाम ।
विश्वेषां देवानां प्रियतम् हिवः स्वाहा ॥ वय ् सोम व्रते तव ।
मनस्तनूषु पिप्रतः । प्रजावन्तो अशीमहि ॥ 128 (10)
T.B.3.7.14.4
देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहा । सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहा ।
कव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहा ॥ देवास इह मादयद्ध्वं ।
सोम्यास इह मादयद्ध्वं । कव्यास इह मादयद्ध्वं ॥
अनन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात् ॥
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

अपैतु मृत्युरमृतं न आगन्न् । वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु । पर्णं वनस्पतेरिव । 129 (10)

T.B.3.7.14.5

अभि नः शीयताण् रियः । सचतां नः शचीपतिः ॥

परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां । यस्ते स्व इतरो देवयानात् ।

चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि । मा नः प्रजाण् रीरिषो मोत वीरान् ॥

इदमू नु श्रेयोऽवसान—मागन्म । यद्गोजिद्—धनजि—दश्वजिद्यत् ।

पणं वनस्पतेरिव । अभि नः शीयताण् रियः () ।

सचतां नः शचीपतिः ॥ 130 (11)

(वनस्पतावद्भ्यो लोका दिधरे तेज इन्द्रियं धामा — शीमही —

वा — भि नः शीयताण् रियरेकं च) (A14)

# तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)

 Prapaataka Korvai with starting Padams of 1 to 14 Anuvaakams : 

 (सर्वान्. – यद् विष्यण्णेन् – वि वै – याः पुरस्ताद् – देवा देवेषु

 – परिस्तृणित – सक्षेदं – यदस्य पारे – उनागस – उदस्तां

 – परीस्तृणित – सक्षेदं – यदस्य पारे – उनागस – उदस्तां

 – पसीद् – ब्रह्म प्रतिष्ठा – यद् देव – यत्ते ग्राव.ण्णा – यद् दिदीक्षे

 – वतुर्दश)

# Korvai with starting Padams of 1, 11, 21 Series of Dasinis : (सर्वान् – भूतिमेव – यामेवाफ्स्वाहुतिम् – वृतानां – पर्णवल्कः – सोम्याना – मस्मिन्, यूज्ञे – ऽग्ने यो नो – ज्योग्जीवाः – । । । । परोरजास्ते – प्र ते महे – ब्रह्म प्रतिष्ठा – गार्.हपत्या — । । सित्र ७ शदुत्तरशतं)

# First and Last Padam 3rd Ashtakam 6th Prapaatakam : (सर्वान्. वै – राचीपतिः)

॥ हरिः ओं ॥

॥ कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः ॥

#### Appendix (of expansions)

<u>T.B.3.7.8.3 "न वा उ वेतन्प्रियसे{1}"</u>

न वा उवेतन्म्रियसे न रिष्यसि देवा ए इदेषि पथिभिः सुगेभिः ।

हरी ते युञ्जा पृषती अभूतामुपास्थाद् – वाजी धुरि रासभस्य ॥ {1}

(Appearing in T.S.4.6.9.4)

\_\_\_\_\_

आशानां त्वा ऽऽशापालेभ्यः । चतुभ्यो अमृतेभ्यः ।

इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः । विधेम हिवषा वयम् ॥ {2}

विश्वा आशा मधुना सं्सृजामि । अनमीवा आप ओषधयो भवन्तु ।

ा । । । ।

अयं यजमानो मृधो व्यस्यताम् । अगृभीताः प्रश्वः सन्तु सर्वे ॥ {3}

(Both {2} and {3} appearing in T.B.2.5.3.3)

<u>T.B.3.7.9.5 – "मित्रो जनान्{4}" "प्र स मित्र{5}"</u>

<mark>मित्रो जनान्</mark> यातयति प्रजानन् मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्यां ।

मित्रः कृष्टीरनिमिषाऽभि चष्टे सत्यायं हृव्यं घृतवद्-विधेम ॥ {4}

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)
प्रसमित्र मर्तो अस्तु प्रयस्वान्. यस्त आदित्य शिक्षति वृतेन ।
न हन्यते न जीयते त्वोतो नैनमण्हो अञ्नोत्यन्तितो न दूरात् ॥ {5}
(Both {4} and {5} appearing in T.S.3.4.11.5
<u>T.B.3.7.11.2 – "उद्वयं तमसस्परि{6}"</u>
उद्वयं तमसस्परि पञ्चन्तो ज्योतिरुत्तरं।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमं ॥ (6)
(Appearing in T.S.4.1.7.4)
<u>T.B.3.7.11.2 - "उदु त्यं{७}" "चित्रं{८}"</u>
्। । । । । ।
<mark>चित्रं</mark> देवाना–मुदगादनीकं चक्षुर् मित्रस्य वरुणस्याऽग्नेः ।
आऽ प्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षण् सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ {8}
( Both {7} and {8] appearing in T.S.1.4.43.1)
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

<u>T.B.3.7.11.3 - "इमं मे वरुण{9}" "तत्त्वा यामि{10}"</u> <mark>इमं में वरुण</mark> श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युरा चके ॥ {**9**} । । । ॥ । । । तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमान-स्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुञ्ज्स मा न आयुः प्रमोषीः ॥ {10} ( Both {9} and {10] appearing in T.S.2.1.11.6) T.B.3.7.11.3 - "त्वं नो अग्ने{11}" "स त्वं नो अग्ने{12}" <mark>त्वं नो अग्ने</mark> वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽवं यासि सीष्ठाः । यजिष्ठो वहि तमः शोशुंचानो विश्वा द्वेषा एसि प्रमुम्ग्ध्यस्मत् ॥ {11} स त्वंनो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो वरुण ए रराणो वीहि मृडीक ए सुहवो न एधि ॥ {12} ( Both {11} and {12] appearing in T.S.2.5.12.3)

```
तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः – (TB 3.7)
<u>T.B.3.7.11.3 - "त्वमग्ने अयाऽसि{13}" "प्रजापते{14}"</u>
<mark>त्वमग्ने अयाऽसि</mark> । अया सन्मनसा हितः । अया सन्.हव्यम्हिषे ।
अया नो धेहि भेषजम् । इष्टो अग्निराहुतः । स्वाहाकृतः पिपर्तु नः ।
स्वगा देवेभ्य इदं नमः ॥ {13} ( {13} appearing in T.B.2.4.1.9 )
प्र<mark>जापते</mark> न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
। ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वय७ स्याम पतयो रयीणाम् ॥ {14}
( {14} appearing in T.S.1.8.14.2)
<u>T.B. 3.7.12.6 - "इमं मे वरुण{15}" "तत्त्वा यामि{16}"</u>
Item mo.{15} is same as {9} above
Item mo.{16} is same as {10} above
                 "त्वं नो अग्ने{17}" "स त्वं नो अग्ने{18}"
T.B.3.7.12.6 -
Item mo.{17} is same as {11} above
Item mo.{18} is same as {12} above
                 त्वमग्ने अयाऽसि{19}"
Item mo.{19} is same as {13} above
```

```
तैत्तिरीय ब्राह्मणम् – अच्छिद्रं – (TB 3.7)
```

आ प्यायस्<mark>व</mark> समेतु ते विश्वतः सोम् वृष्णियं । । भवा वाजस्य सङ्गर्थे ॥ {**20**}

सं ते पया ्सि समु यन्तु वाजाः सं वृष्णिया – न्यभिमातिषाहः ।
ा ा ।
आप्यायमानो अमृताय सोम दिवि श्रवा ्स्युत्तमानि धिष्व ॥ {21}
(Both {20} and {21} appearing in TS 4.2.7.4)

तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः - (TB 3.7)

# Details of Dasini & Vaakyams for

#### Ashtakam 3 Prapaatakam 7 (TB 3.7)

|            | Dasini | Vaakyams |
|------------|--------|----------|
| Anuvakam1  | 9      | 98       |
| Anuvakam 2 | 7      | 73       |
| Anuvakam 3 | 7      | 75       |
| Anuvakam 4 | 18     | 180      |
| Anuvakam 5 | 13     | 137      |
| Anuvakam 6 | 23     | 228      |
| Anuvakam7  | 15     | 155      |
| Anuvakam8  | 3      | 37       |
| Anuvakam9  | 9      | 93       |
| Anuvakam10 | 6      | 63       |
| Anuvakam11 | 5      | 55       |
| Anuvakam12 | 6      | 63       |
| Anuvakam13 | 4      | 45       |
| Anuvakam14 | 5      | 51       |
| Total →    | 130    | 1353     |

ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः

श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

- 3.कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं
- 3.8 तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः

(अश्वमेधब्राह्मणं वैश्वदेवं काण्डं)

T.B.3.8.1.1

3.8.1 अनुवाकं 1 –सांग्रहण्येष्ट्यादयः याजमानसंस्काराः

```
पाप्मनोऽपहत्यै । वाचं ँयत्वोपवसति । सुवर्गस्य लोकस्य गुप्त्यै ।
रात्रिं जागरयन्त आसते । सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥ 2 (15)
(कर्म – धत्ते पञ्च च) (A1)
3.8.2 अनुवाकं 2 - ब्रह्मौदनाभिधानम्
T.B.3.8.2.1
चतुष्टय्य आपो भवन्ति ।
चतुरशफो वा अश्वः प्राजापत्यः समृद्ध्यै ॥
ता दिग्भ्यः समाभृता भवन्ति । दिक्षु वा आपः ।
अन्नं वा आपः । अद्भ्यो वा अन्नं जायते । यदेवाद्भ्योऽन्नं जायते ।
तदवरुन्धे ॥ तासु ब्रह्मौदनं पचित । रेत एव तद्दधाति ॥ 3 (10)
T.B.3.8.2.2
चतुरुशरावो भवति । दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति ॥ उभयतो रुक्मौ भवतः ।
। । । उभयत एवास्मिन्–रुचं दधाति । उद्धरित शृतत्वाय ।
।
सर्पिष्वान् भवति मेद्ध्यत्वाय । चत्वार आर्.षेयाः प्राञ्ञन्ति ।
दिशामेव ज्योतिषि जुहोति । चत्वारि हिरण्यानि ददाति ।
दिशामेव ज्योती ७ष्य वरुन्धे ॥ ४ (10)
```

```
T.B.3.8.2.3
यदाज्य-मुच्छिष्यते । तस्मिन्-रशनां न्युनति । प्रजापतिर्वा ओदनः ।
रेत आज्यम् । यदाज्ये रशनां न्युनितं ।
प्रजापतिमेव रेतसा समर्द्धयति ॥
दर्भमयी रशना भवति ।
बहु वा एष कुचरो-ऽमेद्ध्यमुपगच्छति।
यदश्वः । पवित्रं वै दर्भाः । 5 (10)
T.B.3.8.2.4
यद्दर्भमयी रञ्चा भवति । पुनात्येवैनम् । पूतमेनं मेद्ध्य-मालभते ॥
अश्वस्य वा आलब्धस्य महिमोद-क्रामत् । स महर्त्विजः प्राविशत् ।
तन्महर्त्विजां महर्त्विक्त्वम् । यन्महर्त्विजः प्राञ्जन्ति ।
महिमान-मेवास्मिन्-तद्दंधति ॥
अश्वस्य वा आलब्धस्य रेत उदक्रामत्।
तथ्सुवर्ण एं हिरण्य-मभवत् ()। यथ्सुवर्ण एं हिरण्यं ददाति।
रेत एव तद्दंधाति ॥ ओदने दंदाति । रेतो वा ओदनः ।
रेतो हिरण्यम् । रेतसैवास्मिन् रेतो दधाति ॥ 6 (16)
```

```
(दधाति - रुन्धे - दर्भा - अभवथ् षट्चं) (A2)
3.8.3 अनुवाकं 3 -रशनयाऽश्वबन्धनम्
T.B.3.8.3.1
यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापतये-ऽप्रति-प्रोच्याश्चं मेद्ध्यं बद्ध्नाति ।
आ देवताभ्यो वृश्च्यते । पापीयान्भवति । यः प्रतिप्रोच्य ।
न देवताभ्य आवृश्यते । वसीयान्भवति ॥ यदाह ।
ब्रह्मन्नश्चं मेद्ध्यं भन्थ्स्यामि देवेभ्यः प्रजापतये तेन राद्ध्यासमिति ।
ब्रह्म वै ब्रह्मा।
ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापतये प्रतिप्रोच्याश्चं मेद्ध्यं बद्ध्नाति । 7 (10)
T.B.3.8.3.2
न देवताभ्य आवृश्च्यते । वसीयान् भवति ॥
देवस्य त्वा सवितुः प्रसव इति रशना-मादत्ते प्रसूत्यै।
पूष्णो हस्ताभ्या-मित्याह यत्यै ॥
। । । । ।
व्यृद्धं वा एतद्यज्ञस्य । यदयजुष्केण क्रियते ।
```

```
इमामगृभ्णन् -रशना - मृतस्ये -त्यधि वदति यजुष्कृत्यै ।
यज्ञस्य समृद्ध्यै ॥ 8 (10)
T.B.3.8.3.3
तदाहुः । द्वादशारली रशना कर्तव्या(3) त्रयोदशारली(3)रिति ।
ऋषभो वा एष ऋतूनाम् । यथ्सम् वथ्सरः ।
तस्य त्रयोदशो मासो विष्टपम् । ऋषभ एष यज्ञानाम् ।
यदश्वमेधः । यथा वा ऋषभस्य विष्टपम् । एवमेतस्य विष्टपम् ।
त्रयोदशमरिल्ण् रशनाया-मुपादधाति । ९ (10)
T.B.3.8.3.4
यथर्.षभस्यं विष्टपं स ७स्करोति । तादृगेव तत् ॥
पूर्व आयुषि विदर्थेषु कव्येत्याह । आयुरेवास्मिन् दधाति ॥
तया देवाः सुतमाबभूवु-रित्याह । भूतिमेवोपावर्तते ॥
ऋतस्य सामन्थ् सरमारपन्तीत्याह । सत्यं वा ऋतम् ।
सत्येनैवैन मृतेनारभते ॥ अभिधा असीत्याह । 10 (10)
T.B.3.8.3.5
तस्मा-दश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भवति । भुवन-मसीत्याह ।
भूमान-मेवोपैति । यन्ता-ऽसीत्याह । यन्तारमेवैनं करोति ।
```

```
धर्ताऽसीत्याह । धर्तारमेवैनं करोति । सोऽग्निं वैश्वानर-मित्याह ।
अग्ना-वेवैनं वैश्वानरे जुहोति । सप्रथसमित्याह । 11 (10)
T.B.3.8.3.6
प्रजयैवैनं पशुभिः प्रथयति । स्वाहाकृत इत्याह । होम एवास्यैषः ।
पृथिव्या-मित्याह । अस्यामेवैनं प्रतिष्ठापयति ।
यन्ता राड्यन्ताऽसि यमनो धर्ताऽसि धरुण इत्याह ।
रूपमेवास्यै-तन्महिमानं ँव्याचष्टे ।
कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वेत्याह ।
आशिषमेवैतामाशास्ते ॥
स्वगा त्वा देवेभ्य इत्याह ()। देवेभ्य एवैन ७ स्वगा करोति।
स्वाहा त्वा प्रजापतय इत्याह । प्राजापत्यो वा अश्वः ।
यस्या एव देवताया आलभ्यते । तयैवैन 🗸 समर्द्धयति ॥ 12 (15)
(बध्नाति – समृद्ध्या – उपदंधा – त्यसीत्याह – सप्रथसमीत्याह –
देवेभ्य इत्याह पञ्च च) (A3)
```

```
3.8.4 अनुवाकं 4 -अश्वस्य जलेऽवगाहनम्
T.B.3.8.4.1
यः पितुरनुजायाः पुत्रः । स पुरस्तान्नयति ।
। ॥ ।
यो मातुरनुजायाः पुत्रः । स पश्चान्नयति ।
। ॥ ।
विष्वञ्चमेवास्मात्-पाप्मानं विवृहतः ॥
यो अर्वन्तं जिघा एसित तमभ्यमीति वरुण इति श्वानं
चतुरक्षं प्रसौति ।
परो मर्तः परः श्वेति शुनश्चतु-रक्षस्य प्रहन्ति ।
। ।
श्वेव वै पाप्मा भ्रातृव्यः । पाप्मान–मेवास्य भ्रातृव्य ुः हन्ति ॥
सैद्धकं मुसलं भवति । 13 (10)
T.B.3.8.4.2
कर्म कर्मैवास्मै साधयति ॥ पौ ४ श्वलेयो हन्ति ।
पु ७ श्चल्वां ँवै देवाः शुचं न्यदधुः । शुचैवास्य शुच थ् हन्ति ॥
पाप्मा वा एतमीफ्स–तीत्याहुः । योऽश्वमेधेन यजत इति ।
अश्वस्याधस्पदमुपास्यति । वजी वा अश्वः प्राजापत्यः ।
वजेणैव पाप्मानं भ्रातृव्य-मवक्रामति ॥ दक्षिणा-ऽपप्लावयति । 14(10)
```

```
T.B.3.8.4.3
॥ । ।
आयुर्वा इषीकाः । आयुरे-वास्मिन् दधति । अमृतं वा इषीकाः ।
अमृतमे-वास्मिन् दधति ॥ वेतसञाखोपसंबद्धा भवति ।
अफ्स्—योनिर्वा अश्वः । अफ्सुजो वंतसः ।
स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते () ॥ पुरस्तात्-प्रत्यञ्च-मभ्युदूहति ।
पुरस्ता-देवास्मिन् प्रतीच्य मृतं दधाति ॥
अहं च त्वं च वृत्रहन्निति ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति ।
ब्रह्मक्षत्रे एव संदंधाति ।
अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्नित्य-ध्वर्यु-र्यजमानं
ँवाचयत्य-भिजित्यै ॥ 15 (15)
(भवति – प्लावयति – मिमीते पञ्च च) (८४४)
3.8.5 अनुवाकं 5 –अश्वस्य प्रोक्षणं महर्त्विजाम्
T.B.3.8.5.1
चत्वार ऋत्विजः समुक्षन्ति ।
आभ्य एवैनं चतसृभ्यो दिग्भ्यो-ऽभिसमीरयन्ति ॥
```

शतेन राजपुत्रैः सहाद्ध्वर्युः । पुरस्तात्-प्रत्यङ्तिष्ठन् प्रोक्षति । अनेनाश्चेन मेद्ध्येनेष्ट्वा । अयण् राजा वृत्रं वद्ध्यादिति । राज्यं वा अद्ध्वर्युः । क्षत्र ए राजपुत्रः । राज्येनै – वास्मिन् क्षत्रं दधाति ॥ शतेनां-राजभिरुग्रैः सह ब्रह्मा । 16 (10) T.B.3.8.5.2 दक्षिणत उदङ्तिष्ठन् प्रोक्षंति । अनेनाश्चेन मेद्ध्येनेष्ट्वा । ्रा अयं राजा–ऽप्रतिधृष्यो–ऽस्त्विति । बलं ँवै ब्रह्मा । बलमराजोग्रः । बलेनै-वास्मिन् बलं दधाति ॥ श्रोतेन सूतग्रामणिभिः सह होता । पश्चात्-प्राङ्तिष्ठन् प्रोक्षिति । अनेनाश्चेन मेद्ध्येनेष्ट्वा । अयुं राजाऽस्यै विशः । 17 (10) T.B.3.8.5.3 बहुग्वै बह्वश्वायै बहुजाविकायै । बहुव्रीहियवायै बहुमाषतिलायै । बहुहिरण्यायै बहुहस्तिकायै । बहुदासपूरुषायै रियमत्यै पुष्टिमत्यै । बहुरायस्पोषायै राजाऽस्त्वितं । भूमा वै होता । भूमा सूतग्रामण्यः । भूम्नैवास्मिन् भूमानं दधाति ॥

```
शतेन क्षत्त-संग्रहीतृभिः सहोद्राता।
उत्तरतो दक्षिणा तिष्ठन् प्रोक्षति । 18 (10)
T.B.3.8.5.4
अनेनाश्चेन मेद्ध्ये नेष्ट्वा । अय् राजा सर्वमायुरेत्विति ।
आयुर्वा उदाता । आयुः क्षत्त-संग्रहीतारः ।
आयुषै-वास्मिन्नायु-र्दधाति ॥ शतर् शंतं भवन्ति ।
शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः ।
आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति ॥ चतुः शता भवन्ति ।
चतस्रो दिशः ( ) । दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति ॥ 19 (11)
(ब्रह्मा – विश – उक्षति – दिश एकं च) (A5)
3.8.6 अनुवाकं 6 -भूमौ पततां बिन्द्रनामभिमन्त्रणम्
T.B.3.8.6.1
यथा वै हविषो गृहीतस्य स्कन्दिति । एवं ँवा एतदश्वस्य स्कन्दित ।
यन्निक्तमनां-लब्ध-मुथ्सृजन्ति । यथ्स्तोक्या अन्वाह ।
सर्वहुत-मेवैनं करोत्य-स्कन्दाय । अस्कन्न एं हि तत् ।
यद्धुतस्य स्कन्दति ॥ सहस्र–मन्वाह ।
```

```
सहस्र संमितः सुवर्गो लोकः।
सुवर्गस्य लोकस्या-भिजित्यै ॥ 20 (10)
T.B.3.8.6.2
यत्परिमिता अनुब्रूयात् । परिमितमवरुन्धीत । अपरिमिता अन्वाह ।
अपरिमितः सुवर्गो लोकः । सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥
स्तोक्या जुहोति । या एव वर्ष्या आपः । ता अवरुन्धे ॥
अस्यां जुहोति । इयं ँवा अग्निवैश्वानरः । 21 (10)
 T.B.3.8.6.3
अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति ॥ उवाच ह प्रजापतिः ।
स्तोक्यांसु वा अहमश्वमेध ए स ७ स्थापयामि ।
तेन ततः स७स्थितेन चरामीति ॥ अग्नये स्वाहेत्याह ।
। । । । । । । । । अग्नय एवैनं जुहोति ॥ सोमाय स्वाहेत्याह । सोमायैवैनं जुहोति ।
सवित्रे स्वाहेत्याह । सवित्र एवैनं जुहोति । 22 (10)
T.B.3.8.6.4
सरस्वत्यै स्वाहेत्याह । सरस्वत्या एवैनं जुहोति । पूष्णे स्वाहेत्याह ।
पूष्ण एवैनं जुहोति । बृहस्पतये स्वाहेत्याह ।
बृहस्पतय एवैनं जुहोति । अपां मोदाय स्वाहेत्याह ।
```

```
अद्भ्य एवैनं जुहोति । वायवे स्वाहेत्याह ।
वायव एवैनं जुहोति । 23 (10)
T.B.3.8.6.5
वरुणायैवैनं जुहोति ॥ एताभ्य एवैनं देवताभ्यो जुहोति ॥
। । । । । । । दश दश संपादं जुहोति । दशाक्षरा विराट् । अन्नं विराट् ।
विराजै-वान्नाद्यमवरुन्धे ॥ प्र वा एषो-ऽस्माल्लोका-च्च्यवते ( ) ।
यः पराचीराहुतीर्जुहोति । पुनः पुनरभ्यावर्तं जुहोति ।
अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति ॥
एता एं ह वाव सो ऽश्वमेधस्य स ७ स्थिति मुवाचा – स्कन्दाय ।
.
अस्कन्न৺् हि तत् ।
यद्यज्ञस्य स७स्थितस्य स्कन्दंति ॥ 24 (16)
(अभिजित्यै – वैश्वानरः – सवित्र एवैनम् जुहोति – वायव एवैनम्
जुहोति – च्यवते षट्च) (A6)
```

```
3.8.7 अनुवाकं 7 -अथाध्वर्युप्रोक्षणम्
T.B.3.8.7.1
प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तात्-प्रत्यङ्तिष्ठन् प्रोक्षति ।
प्रजापतिर्वै देवाना-मन्नादो वीर्यावान्।
_ । । ।
अन्नाद्य-मेवास्मिन् वीर्यं दधाति ।
। । ।
तस्मादश्वः पशूना–मन्नादो वीर्यावत्तमः ॥
इन्द्राग्निभ्यां त्वेति दक्षिणतः ।
इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बलिष्ठौ । ओज एवास्मिन् बलं दधाति ।
तस्मादश्वः पञ्जनामोजिष्ठो बलिष्ठः ॥ वायवे त्वेति पश्चात् ।
वायुर्वे देवानामाशुः सारसारितमः । 25 (10)
T.B.3.8.7.2
जवमेवास्मिन्दधाति । तस्मादश्वः पशूनामाशुः सारसारितमः ॥
। । । । । । । । । । । यश एवास्मिन्दधाति । तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितमः ॥
।
देवेभ्य-स्त्वेत्यधस्तात् । देवा वै देवाना-मपचिततमाः ।
```

```
अपचिति-मेवास्मि-न्दधाति ।
तस्मादश्वः पशूना-मपचिततमः ॥ 26 (10)
T.B.3.8.7.3
सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात् । सर्वे वै देवास्त्विषमन्तो हरस्विनः ।
त्विषिमे-वास्मिन्. हरो दधाति ।
तस्मादश्वः पशूनां त्विषिमान्. हरस्वितमः ॥
दिवे त्वाउन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्याह ।
एभ्य एवैनं ँलोकेभ्यः प्रोक्षति ॥
सते त्वाऽसते त्वा-ऽद्भ्यस्त्वौ-षधीभ्यस्त्वा विश्वेभ्यस्त्वा
भूतेभ्य इत्याह ।
तस्मादश्वमेधयाजिन एं सर्वाणि भूतान्युप जीवन्ति ॥
ब्रह्मवादिनो वदन्ति । यत्प्राजापत्योऽश्वः ()।
अथ कस्मादेन-मन्याभ्यो देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीति ।
अश्वे वै सर्वा देवता अन्वायताः ।
तं विद्विश्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति प्रोक्षति ।
```

```
देवता एवास्मिन्-नन्वायातयति ।
तस्मादश्चे सर्वा देवता अन्वायत्ताः ॥ 27 (15)
(सारसारितमो – ऽपंचिततमः – प्राजापत्योऽश्व पञ्चं च) (४७)
3.8.8 अनुवाकं 8 -अश्वचरितानामश्ररूपाणां च होमाः
T.B.3.8.8.1
यथा वै हिविषो गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दिति।
यत्प्रोक्षित-मनालब्ध-मुथ्सृजन्ति । यदश्च-चरितानि जुहोति ।
सर्वहुत-मेवैनं करोत्य-स्कन्दाय । अस्कन्न 💇 हि तत् ।
यद्धतस्य स्कन्दिति ॥ ईंकाराय स्वाहें कृताय स्वाहेत्याह ।
एतानि वा अश्वचरितानि । चरितैरेवैन 🕹 समर्द्धयति ॥ 28 (10)
T.B.3.8.8.2
तदाहुः । अनाहुतयो वा अश्वचरितानि । नैता होतव्या इति ।
अथो खल्वाहुः । होतव्या एव । अत्र वावैवं विद्वानश्चमेध्
म । । । । । । । । । । । । स्म स्थापयित । यदश्य – चिरतानि जुहोति । तस्मा – छोतव्या इति ॥
बहिर्द्धा वा एनमेतदायतनाद्-दधाति ।
भ्रातृव्यमस्मै जनयति । 29 (10)
```

```
T.B.3.8.8.3
यस्यां नायतनं - ऽन्यत्राग्ने - राहुं तीर् जुहोति ।
सावित्रिया इष्ट्याः पुरस्ताथ्स्वष्ट कृतः ।
आहवनीयं-ऽश्वचरितानि जुहोति ।
आयतन एवास्याहुतीर् जुहोति । नास्मै भ्रातृव्यं जनयति ॥ तदाहुः ।
सुवर्गस्य लोकस्या-नुख्यात्या इति ॥ अथो खल्वाहुः । 30 (10)
T.B.3.8.8.4
यद्यज्ञमुखे यज्ञमुखे जुहुयात् । पशुभि-र्यजमानं व्यर्द्धयेत् ।
अवं सुवर्गाल्लोका-त्पंद्येत । पापीयान् थ्स्यादिति ।
। ॥ । सकृदेव होतव्याः । न यजमानं पशुभि-र्व्यर्द्धयति ।
अभि सुवर्गं लोकं जयति । न पापीयान् भवति ॥
अष्टाचत्वारि एशतमश्च रूपाणि जुहोति ।
अष्टाचत्वारि ७ शदक्षरा जगती ( ) । जागतोऽश्वः प्राजापत्यः समृद्ध्यै ॥
एकमितिरिक्तं जुहोति । तस्मादेकः प्रजास्वर्द्धुकः ॥ 31 (13)
(अर्द्धयति – जनयति – खल्वाहुर् – जगती त्रीणि च) (A8)
```

#### 3.8.9 <u>अनुवाकं 9 – अश्वस्य नाम्नामिभवाचनं, उथ्सर्गश्च</u> T.B.3.8.9.1

विभूमित्रा प्रभूः पित्रेत्याह । इयं ँवै माता । असौ पिता । आभ्यामेवैनं परिददाति ॥ अश्वोऽसि हयोऽसीत्याह । ा । ज्ञास्त्येवैनमेतत् । तस्माच्छिष्टाः प्रजा जायन्ते ॥ अत्योऽसीत्याह । तस्मादश्वः सर्वान् पशूनत्येऽति । तस्मादश्वः सर्वेषां पशूना७ श्रेष्ठ्यं गच्छति ॥ 32 (10) T.B.3.8.9.2 प्र यशः श्रेष्ठ्यमाप्नोति । य एवं वैद ॥ । । नरोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरसि वाज्यसीत्याह । रूपमेवास्यैतन्महिमानं ँव्याचष्टे ॥ ययुर्नामा-ऽसीत्याह । एतद्वा अश्वस्य प्रियं नामधेयम् । । । । प्रियेणैवैनं नामधेयेनाभिवदति । तस्मादप्यामित्रौ संगत्य ।

#### T.B.3.8.9.3

नाम्ना चेद्ध्वयेते । मित्रमेव भवतः ॥ 33 (10)

```
पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृव्य-मतिक्रामति ॥
भूरिस भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्सृजिति सर्वत्वाय ॥
देवा आशापाला एतं देवेभ्योऽश्वं मेधाय प्रोक्षितं गोपायतेत्याह ।
शतं वै तल्प्या राजपुत्रा देवा आशापालाः । तेभ्य <u>ए</u>वैनं परिददाति ॥
ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परां परावतं गन्तोः।
इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितिः
स्वाहेति चतृषु पथ्सु जुहोति । 34 (10)
T.B.3.8.9.4
एता वा अश्वस्य बन्धनम् । ताभिरेवैनं बद्ध्नाति ।
। । ।
तस्मादश्वः प्रमुक्तो बन्धन–मागच्छति ।
। । ।
तस्मादश्वः प्रमुक्तो बन्धनं न जहाति ॥
राष्ट्रं वा अश्वमेधः । राष्ट्रे खलु वा एते व्यायच्छन्ते ।
येऽश्वं मेद्ध्य 🗸 रक्षन्ति । तेषां ँय उदृचं गच्छन्ति ।
राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गच्छन्ति ।
अथ य उदृचं न गच्छन्ति ( )। 35 (10)
```

T.B.3.8.9.5

### 3.8.10 अनुवाकं 10 -दीक्षाभिधानम् तत्र वैश्वदेवहोमः

T.B.3.8.10.1

प्रजापति-रकामयताश्चमेधेन यजेयेति । स तपोऽतप्यत ।

तस्य तेपानस्य । सप्तात्मनो देवता उदक्रामन्न् ।

सा दीक्षा-ऽभवत् । स एतानि वैश्वदेवान्यपञ्चत् । तान्य जुहोत् ।

तैर्वे स दीक्षामवारुन्थ । यद्वैश्व देवानि जुहोति ।

दीक्षामेव-तैर्यजमानो-ऽवरुन्थे ॥ 37 (10)

T.B.3.8.10.2

सप्त जुहोति। सप्त हि ता देवता उदक्रामन्न् ॥ अन्वहं जुहोति। - । । । अन्वहं जुहोति। अन्वहमेव दीक्षामवरुन्थे ॥ त्रीणि वैश्वदेवानि जुहोति।

```
चत्वार्यौद्ग्रहणानि । सप्त संपद्यन्ते । सप्त वै शीर षण्याः प्राणाः ।
प्राणा दीक्षा । प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवरुन्धे ॥ 38 (10)
T.B.3.8.10.3
एकवि एशतिं वैश्वदेवानि जुहोति । एकवि एशतिर्वे देवलोकाः ।
द्वादश मासाः पञ्चर्तवः । त्रय इमे लोकाः ।
असावादित्य एकवि ७ इनः ॥ एष सुवर्गो लोकः । तद्दैव्यं क्षुत्त्रम् ।
सा श्रीः । तद्ब्रद्ध्नस्य विष्टपम् । तथ्स्वाराज्य-मुच्यते ॥ 39 (10)
T.B.3.8.10.4
त्रिण्शतमौद्ग्रहणानि जुहोति । त्रिण्शदक्षरा विराट् ।
अन्नं विराट् । विराजैवान्नाद्यमवरुन्धे ॥
त्रेधा विभज्य देवतां जुहोति । त्र्यावृतो वै देवाः ।
त्र्यावृत इमे लोकाः । एषां ँलोकानामाप्त्यै ।
एषां लोकानां क्लृप्त्ये ॥
अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रामन्ति । 40 (10)
T.B.3.8.10.5
यो दीक्षामति-रेचयति । सप्ताहं प्रचरन्ति ।
सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः । प्राणा दीक्षा ।
```

प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवरुन्धे ॥ पूर्णाहुति-मुत्तमां जुहोति । सर्वं वै पूर्णाहुतिः । सर्वमेवाप्नोति । अथो इयं वै पूर्णाहुतिः । अस्यामेव प्रतितिष्ठति ( ) ॥ **४१ (१०)** *(रुन्धे - प्राणान् दीक्षामवरुन्ध* - उच्यते - क्रामन्ति - तिष्ठति) (A10) 3.8.11 अनुवाकं 11 -वैश्वदेवहोममन्त्रव्याख्यानम् T.B.3.8.11.1 प्रजापति-रश्वमेध-मसृजत । त्रं सृष्टं न किञ्चनोदयच्छत् । तं वैश्वदेवान्ये-वोदयच्छन्न् । यद्वैश्वदेवानि जुहोति । यज्ञस्योद्यत्यै ॥ स्वाहा – ऽऽधिमाधीताय स्वाहा । \_\_\_\_\_\_। । \_\_\_\_। । । । । ॥ स्वाहा—ऽऽधीतं मनसे स्वाहा । स्वाहा मनः प्रजापतये स्वाहा । काय स्वाहा कस्मै स्वाहा कतमस्मै स्वाहेति प्राजापत्ये मुख्ये भवतः । प्रजापति-मुखाभिरेवैनं देवताभिरुद्यच्छते ॥ 42 (10) T.B.3.8.11.2 अदित्यै स्वाहाऽदित्यै महौ स्वाहाऽदित्यै सुमृडीकायै स्वाहेत्याह । इयं ँवा अदितिः । अस्या एवैनं प्रतिष्ठायोद्यच्छते ॥ सरस्वत्यै स्वाहा सरस्वत्यै बृहत्यै स्वाहा सरस्वत्यै

```
पावकायै स्वाहेत्याह ।
वाग्वै सरस्वती । वाचैवैनमुद्यच्छते ॥
पूष्णे स्वाहा पूष्णे प्रपथ्याय स्वाहा पूष्णे नरन्धिषाय स्वाहेत्याह ।
पशवो वै पूषा । पशुभिरेवैन-मुद्यच्छते ॥
त्वष्ट्रे स्वाहा त्वष्ट्रे तुरीपाय स्वाहा त्वष्ट्रे पुरुरूपाय स्वाहेत्याह ()।
त्वष्टा वै पशूनां मिथुनाना ्र रूपकृत्। रूपमेव पशुषु दधाति।
अथो रूपैरेवैन-मुद्यच्छते ॥
विष्णवे स्वाहा विष्णवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णवे
निभूयपाय स्वाहेत्याह ।
यज्ञो वै विष्णुः । यज्ञायैवैन-मुद्यच्छते ॥
पूर्णाहुति-मुत्तमां जुहोति । प्रत्युत्तब्ध्यै सयत्वाय ॥ 43 (18)
(यच्छते – पुरुरूपाय स्वाहेत्याहाष्ट्रौ च) (A11)
```

# 3.8.12 <u>अनुवाकं 12 – अश्वसंचरणवथ्सरे प्रतिदिनं देवयजनदेशे</u> कर्तव्यमिष्टित्रयमभिधीयते

```
T.B.3.8.12.1
सावित्र-मष्टाकंपालं प्रातर्निर्वपति ।
अष्टाक्षरा गायत्री । गायत्रं प्रातस्सवनं ।
प्रातस्सवना देवैनं गायत्रिया रुछन्दसोऽधि निर्मिमीते ।
॥ ।
अथो प्रातस्सवनमेव तेनाप्नोति । गायत्रीं छन्दः ॥
सवित्रे प्रसवित्र एकादश-कपालं मद्ध्यन्दिने । एकादशाक्षरा त्रिष्टुप् ।
न्नैष्टुभं माद्ध्यन्दिन् सवनम् ।
माद्ध्यन्दिना-देवैन ए सर्वनात्त्रिष्टुभः - छन्दसोऽधि निर्मिमीते । 44 (10)
T.B.3.8.12.2
। । । अथो माद्ध्यन्दिनमेव सवनं तेनाप्नोति । त्रिष्टुभं छन्दः ॥
सवित्र आसवित्रे द्वादश-कपाल-मपराह्ने । द्वादशाक्षरा जगती ।
जागतं तृतीय सवनम्।
तृतीय सवनादेवैनं जगत्या इछन्दसोऽधि निर्मिमीते।
अथो तृतीय सवनमेव तेनाप्नोति ।
जगतीं छन्दः ॥ ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परां परावतं गन्तोः ।
```

```
इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमतिः
स्वाहेति चतस्र आहुती-र्जुहोति ( )। 45 (10)
T.B.3.8.12.3
चतस्रो दिशः । दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति ॥ आश्वत्थो व्रजो भवति ।
प्रजापति-र्देवेभ्यो निलायत । अश्वो रूपं कृत्वा ।
मोऽश्वत्थे सम्वथ्सर-मतिष्ठत् । तदश्वत्थस्या-श्वत्थत्वम् ।
यदाश्चत्थो व्रजो भवति । स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति ॥ 46 (9)
(त्रिष्ट्रभ ३छन्दसोऽधि निर्मिमीते – जुहोति – +नव च) (A12)
3.8.13 अनुवाकं 13 -संवथ्सरार्द्ध्वमुख्यस्याग्रेरूपस्थानम्
T.B.3.8.13.1
ा । ।
आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायता-मित्याह ।
ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्चसं दधाति ।
तस्मात्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चस्य जायत ॥
आऽस्मिन् राष्ट्रे राजन्य इषव्यः शूरो महारथो जायता-मित्याह ।
राजन्य एव शौर्यं महिमानं दधाति ।
॥ । । । । । ।
तस्मात्पुरा राजन्य इषव्यः शूरो महारथो–ऽजायत ॥
```

```
दोग्ध्री धेनुरित्याह । धेन्वामेव पयो दधाति ।
तस्मात्पुरा दोग्ध्री धेनुरजायत । वोढाऽनड्वा-नित्याह । 47 (10)
T.B.3.8.13.2
ा । ।
अनडुह्येव वीर्यं दधाति । तस्मात्पुरा वोढाऽनड्वानजायत ।
आशुः सप्तिरित्याह । अश्व एव जवं दंधाति ।
तस्मात्पुरा–ऽऽशुरश्चों–ऽजायत । पुरंधिर्योषेत्याह ।
योषित्येव रूपं दंधाति । तस्माथ्स्त्री युवतिः प्रिया भावुका ॥
जिष्णू रथेष्ठा इत्याह । आ ह वै तत्र जिष्णू रथेष्ठा जायते । 48 (10)
T.B.3.8.13.3
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ सभेयो युवेत्याह । यो वै पूर्ववयसी ।
स सभेयो युवा । तस्माद्युवा पुमान् प्रियो भावुकः ॥
आऽस्य यजमानस्य वीरो जायता-मित्याह ।
।
आ ह वै तत्र यजमानस्य वीरो जायते ।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्.षत्वित्याह ।
निकामेनिकामे ह वै तत्र पर्जन्यो वर्.षति ()।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ फलिन्यो न ओषधयः पच्यन्ता-मित्याह ।
```

```
फलिन्यों ह वै तत्रौषधयः पच्यन्ते । यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ।
योगक्षेमो नः कल्पता-मित्याह ।
न । । ।
कल्पते ह वै तत्र प्रजाभ्यो योगक्षेमः ।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ 49 (17)
(अनड्वानित्याह – जायते – वर्.षति सप्त चं) (A13)
3.8.14 अनुवाकं 14 -अन्नहोमाः त्रिरात्ररूपस्याश्चमेधस्य प्रथमदिनरात्रौ
T.B.3.8.14.1
प्रजापति-र्देवेभ्यो यज्ञान् व्यादिशत् । स आत्म-न्नेश्वमेधमधत्त ।
तं देवा अंबुवत् । एष वाव यज्ञः । यदश्वमेधः ।
अप्येव नोऽत्रास्त्विति । तेभ्य एतानन्नहोमान् प्रायच्छत् ।
ा
तानजुहोत् । तैर्वै स देवान प्रीणात् । यदन्न-होमाञ्जुहोति । 50 (10)
T.B.3.8.14.2
देवानेव तैर्यजमानः प्रीणाति ॥ आज्येन जुहोति ।
ा । ।
अग्नेर्वा एतद्रूपम् । यदाज्यम् । यदाज्येन जुहोति ।
अग्निमेव तत्प्रीणाति ॥ मधुना जुहोति ।
महत्यै वा एतद्देवतायै रूपम् । यन्मधु । यन्मधुना जुहोति । 51 (10)
```

```
T.B.3.8.14.3
महतीमेव तद्देवतां प्रीणाति । तण्डुलै-र्जुहोति ।
वसूनां वा एतद्रूपम् । यत्तण्डुलाः । यत्तण्डुलौ-र्जुहोति ।
वस्नेव तत्प्रीणाति । पृथुकै र्जुहोति (र्जुहोति) ।
रुद्राणां वा एतद्रूपम् । यत्पृथुकाः । यत्पृथुकै – र्जुहोति । 52 (10)
T.B.3.8.14.4
रुद्रानेव तत्प्रीणाति । लाजैर्जुहोति । आदित्यानां ँवा एतद्रूपम् ।
यल्लाजाः । यल्लाजै-र्जुहोति । आदित्यानेव तत्प्रीणाति ।
करम्बै-र्जुहोति । विश्वेषां ँवा एतद्देवाना र् रूपम् । यत्करम्बाः ।
यत्करम्बै-र्जुहोति । 53 (10)
T.B.3.8.14.5
विश्वानेव तद्देवान् प्रीणाति । धानाभि-र्जुहोति ।
नक्षत्राणां वा एतद्रूपम् । यद्धानाः । यद्धानाभि-र्जुहोति ।
नक्षत्राण्येव तत्प्रीणाति । सकुभि-र्जुहोति । प्रजापतेर्वा एतद्रूपम् ।
यथ्सक्तवः । यथ्सकुभि-र्जुहोति । 54 (10)
```

प्रजापतिमेव तत्प्रीणाति । मसूस्यैर्जुहोति ।

सर्वासां वा एतद्देवताना ्र रूपम् । यन्मसूस्यानि ।

यन्मसूस्यै – र्जुहोति । सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति ।

प्रियङ्गुतण्डुलै – र्जुहोति । प्रियाङ्गा ह वै नामैते ।

एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गानि समदधः । यत्प्रियङ्गृतण्डुलै – र्जुहोति () ।

अश्वस्यैवाङ्गानि संदधाति ॥ दशान्नानि जुहोति । दशाक्षरा विराट् ।

विराट् – कृथ्स्नस्या – नाद्यस्या – वरुद्ध्यै ॥ 55 (14)

(जुहोति – मधुना जुहोति – पृथुकैर्जुहोति – करम्बैर्जुहोति –

## 3.8.15 अनुवाकं 15 -तत्प्रकारविशेष T.B.3.8.15.1 प्रजापति-रश्वमेधमसृजत । तण् सृष्टण् रक्षा ७स्य जिघाण्सन्न् । स एतान् प्रजापतिर्नक्ष होमान-पश्यत् । तान जुहोत् । तैर्वै स यज्ञाद् रक्षा ७ स्यपाहन् । यन्नक्त ए हो माञ्जुहोति । यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा ७ स्यपहन्ति ॥ आज्येन जुहोति । वजो वा आज्यम् । वजेणैव यज्ञाद् रक्षा ७स्यपहन्ति ॥ **56 (10)** T.B.3.8.15.2 आज्यस्य प्रतिपदं करोति । प्राणो वा आज्यम् । मुखत एवास्य प्राणं दधाति ॥ अन्नहोमाञ्जुहोति । श्रीरवदेवावरुन्धे ॥ व्यत्यासं जुहोति । उभयस्या वरुद्ध्यै ॥ नक्तं जुहोति । रक्षसामपहत्यै ॥ आज्येनान् ततो जुहोति । 57 (10) T.B.3.8.15.3 प्राणो वा आज्यम् । उभयत एवास्य प्राणं दधाति । ॥ । । । । । पुरस्ता-च्चोपरिष्टाच्च ॥ एकस्मै स्वाहेत्याह । अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति । द्वाभ्या 🗸 स्वाहेत्यां ह ।

अमुष्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति । उभयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति ।

```
अस्मि श्रा – मुष्मि श्रा ॥ शताय स्वाहेत्याह ()।
ा ॥ । । ।
शतायुर्वै पुरुषः शतवीर्यः । आयुरेव वीर्यमवरुन्धे ।
सहस्राय स्वाहेत्याह । आयुर्वै सहस्रम् । आयुरेवा-वरुन्धे ॥
सर्वस्मै स्वाहेत्याह । अपरिमितमेवा वरुन्थे ॥ 58 (17)
(एव यज्ञद् रक्षा ७स्यपहन् – त्यन्ततो जुहोति – शताय स्वाहेत्याह
सप्त च) (A15)
3.8.16 अनुवाकं 16 -विवरणमेतयोः
T.B.3.8.16.1
प्रजापतिं वा एष ईफ्सतीत्याहुः । योऽश्वमेधेन यजत इति ।
अथो आहुः । सर्वाणि भूतानीति ॥ एकस्मै स्वाहेत्याह ।
प्रजापतिर्वा एकः । तमेवाप्नोति ॥
एकस्मै स्वाहा द्वाभ्या स्वाहेत्यभि - पूर्वमाहुती - र्जुहोति ।
अभिपूर्वमेव सुवर्गं लोकमेति ॥ एकोत्तरं जुहोति । 59 (10)
T.B.3.8.16.2
एकवदेव सुवर्गं लोकमेति ॥ सन्ततं जुहोति ।
सुवर्गस्य लोकस्य सन्तत्यै ॥ शताय स्वाहेत्यांह ।
```

```
शतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः । आयुरेव वीर्यमवरुन्धे ।
सहस्राय स्वाहेत्याह । आयुर्वै सहस्रम् । आयुरेवा वरुन्धे ॥
____
अयुताय स्वाहा नियुताय स्वाहा प्रयुताय स्वाहेत्याह । 60 (10)
T.B.3.8.16.3
त्रयं इमे लोकाः । इमानेव लोकानवरुन्धे ॥ अर्बुदाय स्वाहेत्याह ।
वाग्वा अर्बुदम् । वाचमेवा वरुन्धे ॥ न्यर्बुदाय स्वाहेत्याह ।
यो वै वाचो भूमा। तन्त्यर्बुदम्।
वाच एव भूमानमवरुन्धे ॥
समुद्राय स्वाहेत्याह । 61 (10)
T.B.3.8.16.4
समुद्रमेवाप्नोति । मद्ध्याय स्वाहेत्याह । मद्ध्यमेवाप्नोति ।
अन्ताय स्वाहेत्याह । अन्तमे-वाप्नोति । परार्द्धाय स्वाहेत्याह ।
परार्द्धमेवाप्नोति ॥ उषसे स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहेत्याह । रात्रिर्वा उषाः ।
अहर्व्युष्टिः ()। अहोरात्रे एवावरुन्धे।
अर्थो अहोरात्रयोरेव प्रतितिष्ठति ॥
ता यदुभयीर्दिवा वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्।
```

```
उषसे स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते
स्वाहेत्यनुदिते जुहोति ।
उदिताय स्वाहा सुवर्गाय स्वाहा लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति।
अहोरात्रयो-ख्यंतिमोहाय ॥ 62 (17)
(एकोत्तरम् जुहोति – प्रयुताय स्वाहेत्याहः – समुद्राय स्वाहेत्याहाहर्
- व्यृष्टिः सप्त च) (A16)
3.8.17 अनुवाकं 17 -सप्तमकाण्डगतान्नहोमानुवाका व्याख्यायन्ते
T.B.3.8.17.1
विभूमीत्रा प्रभूः पित्रेत्यश्य-नामानि जुहोति ।
्। । ॥ ।
उभयोरेवैनं ँलोकयो–र्नामधेयं गमयति ॥
। । ।
आयनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहेत्युद्-द्रावाञ्जुहोति ।
्र
सर्वमेवैन-मस्कन्न ए सुवर्गं ँलोकं गमयति ॥
। ।
अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमा-ञ्जुहोति ।
पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृव्य-मतिक्रामति ॥
पृथिव्यै स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्याह । यथा यजुरेवैतत् ॥
```

```
अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुहोति ।
पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृव्य-मतिक्रामति ॥ 63 (10)
T.B.3.8.17.2
पृथिव्यै स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्ये-कवि श्रानीं दीक्षां जुहोति।
एकवि ्रातिर्वे देवलोकाः । द्वादेश मासाः पञ्चर्तवः ।
त्रय इमे लोकाः । असावादित्य एकवि एकः । एष सुवर्गो लोकः ।
सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥
भुवो देवानां कर्मणेत्यृतु-दीक्षा जुहोति ।
ऋतूने – वास्मै कल्पयति ॥
अग्नये स्वाहा वायवे स्वाहेति जुहोत्य-नन्तरित्यै ॥ 64 (10)
T.B.3.8.17.3
अर्वाङ्यज्ञः संक्रामित्व-त्याप्तीं-र्जुहोति । सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै ॥
भूतं भव्यं भविष्यदिति पर्याप्ती-र्जुहोति ।
सुवर्गस्य लोकस्य पर्याप्त्यै ॥
आ मे गृहा भवन्त्वित्याभू – र्जुहोति । सुवर्गस्य लोकस्या भूत्यै ॥
। । । । । । । । । अग्निना तपो-ऽन्वभवदित्यनुभू-र्जुहोति । सुवर्गस्य लोकस्यानुभूत्यै ॥
```

```
स्वाहा-ऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति ।
समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृव्य-मतिक्रामति ॥ 65 (10)
T.B.3.8.17.4
———— ॥ । । ।
दद्भ्यः स्वाहा हनूभ्या७ स्वाहेत्यङ्गहोमा–ञ्जूहोति ।
अङ्गे अङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपश्लिष्टः ।
।
अङ्गादङ्गा देवैनं पाप्मनस्तेन मुञ्चति ॥
अञ्ज्येताय स्वाहा कृष्णाय स्वाहा श्वेताय स्वाहेत्य-
श्ररूपाणि जुहोति।
रूपैरेवैन 💇 समर्द्धयति ॥
ा ।
ओषधीभ्यः स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहेत्योषधि होमाञ्जुहोति ।
द्वय्यो वा ओषधयः । पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति ।
मूलेभ्योऽन्याः । ता एवोभयीरवरुन्थे ॥ 66 (10)
T.B.3.8.17.5
वनस्पतिभ्यः स्वाहेति वनस्पति–होमाञ्जुहोति ।
आरण्यस्यानाद्यस्यावरुद्ध्यै ॥
। ।
मेषस्त्वा पचतै-रवत्वित्य-पाव्यानि जुहोति ।
```

```
॥ ।
प्राणा वै देवा अपाव्याः । प्राणानेवावरुन्धे ॥
कूप्याभ्यः स्वाहाऽद्भ्यः स्वाहेत्यपाण् होमाञ्जुहोति ।
अफ्सु वा आपः । अन्नं वा आपः ।
अद्भ्यो वा अन्नं जायते । यदेवाद्भ्योऽन्नं जायते ()।
तदवरुन्धे ॥ 67 (11)
(पूर्वदीक्षा जुहोति पूर्व एव द्विषन्तम् भ्रातृव्यमतिक्राम –
त्यनन्तरित्यै – क्रामति – रुन्धे – जायत एकं च) (A17)
3.8.18 अनुवाकं 18 -सप्तमकाण्डगतान्नहोमानुवाका व्याख्यायन्ते
T.B.3.8.18.1
अम्भार्ंसि जुहोति । अयं ँवै लोको-ऽम्भार्ंसि ।
तस्य वस्तवो-ऽधिपतयः । अग्निर्ज्योतिः । यदम्भार्सि जुहोति ।
इममेव लोकमवरुन्धे । वसूना एं सायुज्यं गच्छति ।
अग्निं ज्योतिखरुन्धे ॥ नभार्स जुहोति ।
अन्तरिक्षं वै नभार्सा । 68 (10)
```

```
T.B.3.8.18.2
तस्यं रुद्रा अधिपतयः । वायुर्ज्योतिः । यन्नभार्ंसि जुहोति ।
अन्तरिक्षमेवा-वरुन्धे । रुद्राणा 🗸 सायुज्यं गच्छति ।
वायुं ज्योतिरवरुन्धे । महा एसि जुहोति । असौ वै लोको महा एसि ।
तस्यादित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः । 69 (10)
T.B.3.8.18.3
यन्महा एंसि जुहोति । अमुमेव लोकमवरुन्धे ।
आदित्याना एं सायुज्यं गच्छति । सूर्यं ज्योतिखरुन्धे ॥
नमो राज्ञे नमो वरुणायेति यव्यानि जुहोति ।
अन्नाद्यस्यावरुद्ध्यै ॥ मयोभूर्वातो अभि वातूस्रा इति गव्यानि जुहोति ।
पशूनामवरुद्ध्यै ॥
प्राणाय स्वाहा व्यानाय स्वाहेति सन्तति-होमाञ्जुहोति ।
सुवर्गस्य लोकस्य सन्तत्यै ॥ 70 (10)
T.B.3.8.18.4
सिताय स्वाहा-ऽसिताय स्वाहेति प्रमुक्ती-र्जुहोति ।
।
सुवर्गस्य लोकस्य प्रमुक्त्यै ॥ पृथिव्यै स्वाहा – ऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्याह ।
यथा यजुरेवैतत्॥
```

```
दत्त्वते स्वाहां – ऽदन्तकाय स्वाहेति शरीर – होमाञ्जुहोति ।
पितृलोकमेव तैर्यजमानो-ऽवरुन्धे ॥
— । । । । । । । । कस्त्वा युनिक स त्वा युनिकत्वित परिधीन्. युनिक ।
इमे वै लोकाः परिधयः । इमानेवास्मै लोकान्. युनिक्त ।
सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥ 71 (10)
T.B.3.8.18.5
— । । । । यः प्राणतो य आत्मदा इति महिमानौ जुहोति ।
सुवर्गी वै लोको महः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजमानोऽवरुन्धे॥
आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामिति समस्तानि
ब्रह्मवर्चसानि जुहोति।
ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानो ऽवरुन्धे ॥
जज्ञि बीजमिति जुहोत्य-नन्तरित्यै ॥
ा । । । । । । अग्नये समनम-त्पृथिव्यै समनमदिति सन्नति होमाञ्जुहोति ।
सुवर्गस्य लोकस्य संनत्यै ॥
-- ।
भूताय स्वाहा भविष्यते स्वाहेति भूताभव्यौ होमौ जुहोति ।
अयं वै लोको भूतम्। 72 (10)
```

```
T.B.3.8.18.6
असौ भविष्यत् । अनयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति ।
॥
सर्वस्याप्त्यै । सर्वस्यावरुद्ध्यै ॥
। । । ।
यदक्रन्दः प्रथमं जायमान इत्यश्वस्तोमीयं जुहोति ।
सर्वस्याप्त्यै । सर्वस्य जित्यै ॥ सर्वमेव तेनाप्नोति ।
सर्वं जयति । योऽश्वमेधेन यजते ( ) । 73 (10)
T.B.3.8.18.7
य उ चैनमेवं वैद ॥ यज्ञ ए रक्षा ७ स्य जिघा ० सन् ।
स एतान् प्रजापति-र्नक्ष होमानपश्यत् । तानजुहोत् ।
तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा ७ स्यपाहन् । यन्नक ए होमाञ्जुहोति ।
यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा ७ स्यपहन्ति ॥
उषसे स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहेत्यन्ततो जुहोति।
सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥ 74 (9)
'
(वै नभार्स – सूर्यो ज्योतिः – सन्तत्यै – समष्ट्यै – भुतम् –
ँयजते – +नव च) (A18)
```

#### 3.8.19 अनुवाकं 19 -औपसथ्यदिने यूपप्रयोगाः

```
T.B.3.8.19.1
एकयूपो वैकादिशनी वा । अन्येषां यज्ञानां यूपा भवन्ति ।
। । । । । । एकवि एकवि एकिन्यश्वमेधस्य । सुवर्गस्य लोकस्या-भिजित्यै ॥
बैल्.वो वा खादिरो वा पालाशो वा ।
अन्येषां यज्ञक्रतूनां यूपा भवन्ति ।
।
राज्जुदाल एकविं्शत्य-रितरश्वमेधस्य ।
। । । । । सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥ नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति ।
अवद्यन्यश्वस्य । 75 (10)
T.B.3.8.19.2
पाप्मा वै तेजनी । पाप्मनोऽपहत्यै ॥
प्लक्षशाखायामन्येषां पशूनामवद्यन्ति । वेतस-शाखाया-मश्वस्य ।
। ।
अफ्सुयोनिर्वा अश्वः । अफ्सुजो वेतसः ।
स्व एवास्य योनाव-वद्यति ॥
यूपेषु ग्राम्यान् पशून्नि-युञ्जन्ति । आरोकेष्वा-रण्यान्धारयन्ति ।
पशूनां ँव्यावृत्त्यै () ॥ आ ग्राम्यान् पशून्-ँलभन्ते ।
```

```
प्रारण्यान्थ्सृजन्ति । पाप्मनो-ऽपहत्यै ॥ 76 (13)
(अश्वस्य – व्यावृत्त्यै त्रीणि च) (A19)
3.8.20 अनुवाकं 20 -यूपानां स्थानादयः
T.B.3.8.20.1
राज्जुदाल-मग्निष्ठं मिनोति । भ्रूणहत्याया अपहत्यै ॥
्।
पौतुद्रवावभितो भवतः । पुण्यस्य गन्धस्यावरुद्ध्यै ।
भूणहत्या-मेवास्मा-दपहत्य । पुण्येन गन्धेनोभयतः परिगृह्णाति ॥
षड्बैल्.वा भवन्ति । ब्रह्मवर्चसस्या-वरुद्ध्यै ॥ षट्खादिराः ।
तेजसो-ऽवरुद्ध्यै ॥ 77 (10)
T.B.3.8.20.2
एकवि एं इतिर्वे देवलोकाः । द्वादश मासाः पञ्चर्तवः ।
त्रयं इमे लोकाः । असावादित्य एकवि एकः ।
एष सुवर्गी लोकः।
सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥ शतं पशवों भवन्ति । 78 (10)
```

```
T.B.3.8.20.3
शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः । आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति ॥
सर्वं वा अश्वमेद्ध्याप्नोति । अपरिमिता भवन्ति ।
। ।
अपरिमितस्या–वरुद्ध्यै ॥ ब्रह्मवादिनो वदन्ति । कस्माथ्सत्यात् ।
दक्षिणतो – ऽन्येषां पशूनामवद्यन्ति । उत्तरतो – ऽश्वस्येति ।
वारुणो वा अश्वः । 79 (10)
T.B.3.8.20.4
एषा वै वरुणस्य दिक् । स्वायामेवास्य दिश्यवद्यति ।
न्तर्वा । । । । । । यदितरेषां पशूनामवद्यति । शतदेवत्यं तेनावरुन्धे ॥
॥ ।
चिते-ऽग्ना-वधिवैतसे कटेऽश्वं चिनोति । अफ्सु-योनिर्वा अश्वः ।
अफ्सुजो वेतसः । स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति ॥
पुरस्ता-त्प्रत्यञ्चं तूपरं चिनोति । पश्चात्प्राचीनं गोमृगम् । 80 (10)
T.B.3.8.20.5
॥ ।
प्राणापाना-वेवास्मिन् थ्सम्यञ्चौ दधाति ॥
- - - । । । । अश्वं तूपरं गोमृगमिति सर्वहुत एताञ्जुहोति ।
एषां लोकाना-मभिजित्यै ॥ आत्मना-ऽभिजुहोति ।
सात्मानमेवैन एं सतनुं करोति ॥ सात्माऽमुष्मिन् ँलोके भवति ।
```

```
य एवं वैद । अथो वसीरेव धारां तेनावरुन्धे ॥
इलुवर्दाय स्वाहा बलिवर्दाय स्वाहेत्याह ।
सम्वथ्सरो वा इलुवर्दः ()।
परिवथ्सरो बलिवर्दः । सम्वथ्सरादेव परिवथ्सरादायुर वरुन्धे ।
आयुरेवास्मिन्-दधाति ।
तस्मादश्य-मेधयाजी जरसा विस्रसाऽमुं ँलोकमेति ॥ 81 (14)
(तेजसोऽवरुखै – भवन् – त्यश्वो – गोमृग – मिलुवर्द श्वत्वारि च)
(A20)
3.8.21 अनुवाकं 21 -चेतव्याग्नयादेर्विशेषः
T.B.3.8.21.1
एकविर्शोऽग्निर्भवति । एकविर्शः स्तोमः । एकविर्शतिर्यूपाः ॥
यथा वा अश्वां वर्षभा वा वृषाणः स७स्फुरेरत्र् ।
एवमेतथ्स्तोमाः स७स्फुरन्ते । यदेकविण्ञाः । ते यथ्समृच्छेरन्न् ।
हन्येतास्य यज्ञः ॥ द्वादश एवाग्निः स्यादित्याहुः ।
द्वादशः स्तोमः । 82 (10)
```

```
T.B.3.8.21.2
एकादश् यूपाः ॥ यद्द्वादशो–ऽग्निर्भवति । द्वादश मासाः सम्वथ्सरः ।
सम्वथ्सरेणैवास्मा अन्नमवरुन्धे ॥ यद्दश यूपा भवन्ति ।
दशाक्षरा विराट् । अन्नं विराट् । विराजैवान्नाद्य-मवरुन्धे ।
य एकादशः । स्तन एवास्यै सः । 83 (10)
T.B.3.8.21.3
दुह एवैनां तेन ॥ तदाहुः ।
यद्द्वादशोऽग्निः स्याद्द्वादशः स्तोम एकादश यूपाः ।
यथा स्थूरिणा यायात् । तादृक्तत् ॥
एकवि ७ इर्ग एवाग्निः स्यादित्याहुः । एकवि ७ इर्गः स्तोमः ।
एकवि एशतिर्यूपाः । यथा प्रष्टिभिर्याति ।
तादृगेव तत् ॥ 84 (10)
T.B.3.8.21.4
यो वा अश्वमेधे तिस्रः ककुभो वेद । ककुद्ध राज्ञां भवति ।
एकविण्शो–ऽग्निर्भवति । एकविण्शः स्तोमः । एकविण्शतिर्यूपाः ।
एता वा अश्वमेधे तिस्रः ककुभः । य एवं वैद ।
ककुद्ध राज्ञां भवति ॥
```

```
यो वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि वेद । शिरो ह राज्ञां भवति ()।
एकवि ७ शो – ऽग्निर्भवति । एकवि ७ शः स्तोमः । एकवि ७ शतिर्यूपाः ।
एतानि वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्.षाणि । य एवं वैद ।
शिरों ह राज़ां भवति ॥ 85 (16)
(द्वादशः स्तोमः–स– एव तच् – छिरो ह राज्ञां भवति षट्च)
(A21)
3.8.22 अनुवाकं 22 - उक्थ्याख्ये द्वितीयेऽहिन बहिष्पवमाने अश्वस्योदातृत्वम्
T.B.3.8.22.1
देवा वा अश्वमेधे पवमाने । सुवर्गं लोकं न प्राजानन्न् ।
तमश्रः प्राजानात् ।
यदश्वमेधे-ऽश्वेन मेद्ध्येनोदञ्चो बहिष्पवमान एं सर्पन्ति ।
सुवर्गस्य लोकस्य प्रज्ञात्यै।
न वै मनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद।
। । । । । । अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद ॥ यदुदा—तोदायेत् ।
यथाऽक्षेत्रज्ञोऽन्येन पथा प्रतिपादयेत् ।
तादृक्तत् । 86 (10)
```

```
T.B.3.8.22.2
। । । । ।
उद्गातार–मपरुद्ध्य । अश्व–मुद्रीथाय वृणीते ।
एवमेवैनमश्चः सुवर्गं लोकमञ्जसा नयति ॥ पुच्छमन्वारभन्ते ।
सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥ हिं करोति । सामैवाकः ।
हिं करोति । उद्गीथ एवास्य सः ॥ 87 (10)
T.B.3.8.22.3
वडबा उप रुन्धन्ति । मिथुनत्वाय प्रजात्यै ।
अथो यथोपगातार उपगायन्ति । तादृगेव तत् ॥
उदंगासीदश्वो मेद्ध्य इत्याह । प्राजापत्यो वा अश्वः ।
प्रजापति-रुद्रीथः । उद्गीथमेवावरुन्धे ।
अथो ऋख्सामयोरेव प्रतितिष्ठति ॥ हिरण्येनोपाकरोति ()।
ज्योतिर्वे हिरण्यम् । ज्योतिरेव मुखतो दधाति ।
यजमाने च प्रजासुं च।
अथो हिरण्यज्योतिरेव यजमानः सुवर्गं ँलोकमेति ॥ 88 (14)
(तथ् – स – उपाकरोति चत्वारि च) (A22)
```

# 3.8.23 अनुवाकं 23 – अश्वे पर्यग्न्यप्रयन्तानां पशूनां नियोजनं T.B.3.8.23.1 पुरुषो वै यज्ञः । यज्ञः प्रजापतिः । यदश्चे पश्रित्रेयुञ्जन्ति । यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुङ्क्ते ॥ अश्वं तूपरं गोमृगम् । तानग्निष्ठ आलभते । सेनामुखमेव तथ्स ७३यति । तस्माद् राजमुखं भीष्मं भावुकम् ॥ आग्नेयं कृष्णग्रीवं पुरस्ता-ल्ललाटे । पूर्वाग्निमेव तं कुरुते । **89 (10)** T.B.3.8.23.2 तस्मा-त्पूर्वाग्निं पुरस्ता-थ्स्थापयन्ति ॥ पौष्णमन्वञ्चम् । ा । । । अन्नं वै पूषा । तस्मा-त्पूर्वाग्ना-वाहार्य-माहरन्ति ॥ ऐन्द्रापौष्ण मुपरिष्टात् । ऐन्द्रो वै राजन्योऽन्नं पूषा । । । ॥ ॥ ॥ अन्नाद्येनैवैन-मुभयतः परिगृह्णाति । तस्माद् राजन्योन्नादो भावुकः ॥ आग्नेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः । बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते । 90 (10) T.B.3.8.23.3 तस्माद् राजन्यो बाहुबली भावुंकः ॥ त्वाष्ट्रौ लोमशसक्थौ सक्थ्योः । सक्थ्योरेव वीर्यं धत्ते । तस्माद् राजन्य ऊरुबली भावुकः ॥ शितिपृष्ठौ बार्.हस्पत्यौ पृष्ठे । ब्रह्मवर्चस-मेवोपरिष्टाब्दते । अथो कवचे एवैते अभितः पर्यूहते ।

## तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अश्वमेधं - वैश्वदेवं - (TB 3.8)

तस्माद् राजन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति ॥ धान्ने पृषोद्र-मधस्तात् ।

प्रतिष्ठामेवैतां कुरुते () । अथो इयं वै धाता ।

प्रतिष्ठामेव प्रतितिष्ठति ॥ सौर्यं बलक्षां पुच्छे । उथ्सेधमेव तं कुरुते ।

तस्मादुथ्सेधं भये प्रजा अभिस्थिश्रयन्ति ॥ ११ (15)

(कुरुते - धत्ते - कुरुते पञ्च च) (A23)

rapaataka Korvai with starting Padams of 1 to 23 Anuvaakams 
(सांग्रहण्या — चतुष्ट्रय्यो — यो वै — यः पितु — श्चत्वारो —

गण्या निक्तम् — प्रजापतये त्वा— यथा प्रोक्षितं — विभूराह—

गण्यापतिरकामयताश्चमेधेन — प्रजापतिर्न किञ्च न — सावित्र — मा

गण्यापतिरकामयताश्चमेधेन — प्रजापतिर्न किञ्च न — सावित्र — मा

बह्मन् — प्रजापतिर् देवेभ्यः — प्रजापति रक्षाल्सि —

गण्यापतिमीफ्सिति — विभुरश्चनामान्य — म्भालं — स्येकयूपो —

गण्यापतिमीफ्सित — विभुरश्चनामान्य — म्भालं — स्येकयूपो —

राज्जुदाल — मेकविल्शो — देवाः — पुरुष स्त्रयोविल्शितः)

Korvai with starting Padams of 1, 11, 21 Series of Dasinis :
(सांग्रहण्या – तस्मादश्वमेधयाजी – यत् परिमिता – यद् यज्ञमुखे –

यो दीक्षाम् – देवानेव – त्रय इमे – सिताय – प्राणापानावेवास्मिन्

॥ ॥ ॥

तस्माद् राजन्य एकनवतिः)

First and Last Padam 3rd Ashtakam 8th Prapaatakam :-। (सांग्रहण्या – स⊌श्रयन्ति)

॥ हरिः ओम् ॥

॥ कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः ॥

## तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अश्वमेधं - वैश्वदेवं - (TB 3.8)

#### <u>Details of Dasini &Vaakyams for</u> <u>Ashtakam 3 Prapaatakam 8 (TB 3.8)</u>

|            | Dasini | Vaakyams |
|------------|--------|----------|
| Anuvakam1  | 2      | 25       |
| Anuvakam 2 | 4      | 46       |
| Anuvakam 3 | 6      | 65       |
| Anuvakam 4 | 3      | 35       |
| Anuvakam 5 | 4      | 41       |
| Anuvakam 6 | 5      | 56       |
| Anuvakam7  | 3      | 35       |
| Anuvakam8  | 4      | 43       |
| Anuvakam9  | 5      | 49       |
| Anuvakam10 | 5      | 50       |
| Anuvakam11 | 2      | 28       |
| Anuvakam12 | 3      | 29       |
| Anuvakam13 | 3      | 37       |
| Anuvakam14 | 6      | 64       |
| Anuvakam15 | 3      | 37       |
| Anuvakam16 | 4      | 47       |
| Anuvakam17 | 5      | 51       |
| Anuvakam18 | 7      | 69       |
| Anuvakam19 | 2      | 23       |
| Anuvakam20 | 5      | 54       |
| Anuvakam21 | 4      | 46       |
| Anuvakam22 | 3      | 34       |
| Anuvakam23 | 3      | 35       |
| Total →    | 91     | 999      |

ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः

श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

### 3.कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं

3.9 तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः

(अश्वमेधस्य द्वितीय-तृतीया हर्विधानम्)

3.9.1 अनुवाकं 1 -अष्टादिशनां ग्राभ्याणां आरण्यानां च पशूनां प्रयोगः

```
इतरेषु यूपेष्वष्टादशिनो – ऽजामित्वाय ॥
नव नवालभ्यन्ते सवीर्यत्वाय ॥ यदारण्यैः स७ स्थापयेत् ।
व्यवस्येतां पिता पुत्रौ । व्यद्ध्वानः क्रामेयुः ।
विदूरं ग्रामयो ग्रीमान्तौ स्याताम् । 2 (10)
T.B.3.9.1.3
ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिण आव्याधिनी-स्तस्करा
अरण्येष्वा-जायेरत्र् ॥
तदाहुः । अपञावो वा एते । यदारण्याः ।
यदारण्यैः सं⊌स्थापयेत । क्षिप्रे यजमान-मरण्यं मृत्रं हरेयुः ।
अरण्यायतना ह्यारण्याः प्रश्व इति । यत्पशून्नालभेत ।
अनवरुद्धा अस्य पशवः स्युः । यत्पर्यग्नि-कृतानुथ्सृजेत् । 3 (10)
T.B.3.9.1.4
यज्ञवेशसं कुर्यात् ॥ यत्पशूनालभते । तेनैव पशूनवरुन्धे ।
यत्पर्यग्नि-कृतानुथ्सृजत्य-यज्ञवेशसाय।
अवरुद्धा अस्य पशवो भवन्ति ।
। । । । । । । न यज्ञवेश संभवति । न यजमान-मरण्यं मृत्र ् हरन्ति ॥
```

```
ग्राम्यैः स७स्थापयति । एते वै पशवः क्षेमो नाम ।
सं पिता पुत्राव वस्यतः ()। समद्ध्वानः क्रामन्ति।
समन्तिकं ग्रामयो-ग्रीमान्तौ भवतः ।
नर्क्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिण आव्याधिनी-स्तस्करा
अरण्येष्वा जायन्ते ॥ 4 (13)
।
(ऋतवः – स्याता – मुथ्सृजेथ् – स्यतस्त्रीणि च)(A1)
3.9.2 अनुवाकं 2 –चातुर्मास्यपशूनां प्रयोगः
T.B.3.9.2.1
प्रजापतिर-कामयतोभौ लोकाव-वरुन्धीयेति ।
स प्तानुभयान् पञ्चन पञ्चत् । ग्राम्या ७ ४॥ – रण्या ७ ४॥ । तानाल भत ।
तैर्वे स उभौ लोकाव वारुन्थ । ग्राम्यैरेव पशुभिरिमं लोकम वारुन्थ ।
आरण्यैरमुम् । यद्ग्राम्यान् पशूनालभते ।
इममेव तैर्लोकमवरुन्धे । यदारण्यान् । 5 (10)
T.B.3.9.2.2
अमुं तैः ॥ अनवरुद्धो वा एतस्य सम्वथ्सर इत्याहुः ।
य इत इतश्चातुर्मास्यानि सम्वथ्सरं (सम्वथ्सरं) प्रयुद्ध इति ।
```

```
एतावान्. वै सम्वथ्सरः । यच्चातुर्मास्यानि ।
यदेते चातुर्मास्याः पशवं आलभ्यन्ते ।
प्रत्यक्षमेव तैः सम्वथ्सरं यजमानो-ऽवरुन्थे ।॥
वि वा एष प्रजया पशुभिर्. ऋद्ध्यते ।
यः सम्वथ्सरं प्रयुद्धे । सम्वथ्सरः सुवर्गो लोकः । 6 (10)
T.B.3.9.2.3
सुवर्गं तु लोकं नापराद्ध्नोति । प्रजा वै पशवं एकादशिनीं ।
यदेत ऐकादिशनाः पशवं आलभ्यन्ते ।
साक्षादेव प्रजां पशून्. यजमानो-ऽवरुन्धे ॥
प्रजापति-र्विराजमसृजत । सा सृष्टाऽश्वमेधं प्राविशत् ।
तां दिशिभिरनु प्रायुङ्क । तामाप्नोत् ।
तामाप्त्वा दशिभिरवारुन्ध । यद्दशिन आलभ्यन्ते । ७ (१०)
T.B.3.9.2.4
विराजमेव तैराप्त्वा यजमानो-ऽवरुन्धे ॥ एकांदश दशत आलंभ्यन्ते ।
एकादशाक्षरा त्रिष्टुप् । त्रैष्टुभाः पश्चवः । पशूनेवावरुन्धे ॥
वैश्वदेवो वा अश्वः। नानादेवत्याः पश्चवो भवन्ति ।
```

```
अश्वस्य सर्वत्वाय । नानारूपा भवन्ति । तस्मान्नानारूपाः पशवः( ) ।
(आरण्यान्-ँलोको-दिशन आलभ्यन्ते-नानारूपाः
पशवो हे च) (A2)
3.9.3 अनुवाकं 3 -रोहितादीनां पशूनां वपाहोमसाहित्यम्
T.B.3.9.3.1
अस्मै वै लोकायं ग्राम्याः पशव आलभ्यन्ते । अमुष्मा आरण्याः ।
यद्ग्राम्यान् पञ्चानालभेते । इममेव तैर्लोकमवरुन्धे । यदारण्यान् ।
अमुं तैः । उभयान् पञ्चनालभते । ग्राम्या ७ श्चा – रण्या ७ श्च ।
उभयोर् लोकयोर वरुद्ध्यै । उभयान् पशूनालभते । 9 (10)
ग्राम्या ७ श्रा – रण्या ७ श्र । उभयस्या – न्नाद्यस्या – वरुद्ध्यै ।
उभयान् पशूनालभते । ग्राम्या ७ श्चारण्या ७ श्चे ।
उभयेषां पशूनामवरुद्ध्यै ॥ त्रयस्त्रयो भवन्ति । त्रय इमे लोकाः ।
एषां ँलोकानामाप्त्यै ॥ ब्रह्मवादिनो वदन्ति । कस्माथ्सत्यात् । 10 (10)
```

```
T.B.3.9.3.3
```

```
अस्मिन् ँलोके बहवः कामा इति ।

ग्रंथसमानीभ्यो देवताभ्यो-ऽन्येऽन्ये पृश्चव आल्भ्यन्ते ।

अस्मिन्नेव तल्लोके कामान्दधाति ।

तस्मादस्मिन्-ँलोके बहवः कामाः ॥

त्रयाणां त्रयाणाण् सह वपा जुहोति । त्र्यावृतो वै देवाः ।

त्रयावृत इमे लोकाः । एषां ँलोकानामाप्त्ये । एषां ँलोकानां क्लृप्त्ये ॥

पर्यग्नि-कृता-नारण्या-नृथ्सृजन्त्यहिण्साये () ॥ 11 (10)

(अवस्द्ध्या उभयान् पृशूनालभते – सत्या – दहिण्सायै)(A3)
```

### 3.9.4 अनुवाकं 4 -अश्वस्य रथयोजनालंकारादयः

#### T.B.3.9.4.1

युञ्जन्ति ब्रद्ध्निमित्याह । असौ वा आदित्यो ब्रद्ध्नः ।
आदित्य-मेवास्मै युनिक्त । अरुषिमित्याह । अग्निर्वा अरुषः ।
आग्निमेवास्मै युनिक । चरन्तमित्याह । वायुर्वे चरन्न् ।
वायुमेवास्मै युनिक । परितस्थुष इत्याह । 12 (10)

```
T.B.3.9.4.2
इमे वै लोकाः परितस्थुषः । इमनेवास्मै लोकान्. युनिक्त ॥
रोचन्ते रोचना दिवीत्याह । नक्षत्राणि वै रोचना दिवि ।
। । । । । । नक्षत्राण्येवास्मै रोचयति ॥ युञ्जन्त्यस्य काम्येत्याह ।
कामानेवास्मै युनिक ॥ हरी विपक्षसेत्याह ।
इमे वै हरी विपक्षसा । इमे एवास्मै युनिक्त ॥ 13 (10)
T.B.3.9.4.3
शोणा धृष्णू नृवाहसेत्याह । अहोरात्रे वै नृवाहसा ।
अहोरात्रे एवास्मै युनिक ॥ एता एवास्मै देवता युनिक ।
सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्यै ॥
केतुं कृण्वन्न-केतव इति द्ध्वजं प्रतिमुञ्चति ।
यश एवैन 💇 राज्ञां गमयति ॥
जीम्तस्येव भवति प्रतीकमित्याह । यथा यजुरेवैतत् ॥
ये ते पन्थानः सवितः पूर्व्यास इत्यद्ध्वर्यु-र्यजमानं
ँवाचयत्यभिजित्यै ॥ 14 (10)
```

```
T.B.3.9.4.4
परा वा एतस्य यज्ञ एति । यस्य पशुरुपा-कृतो-ऽन्यत्र वेद्या एति ।
एत ७ स्तोतरेतेन पथा पुनरश्च-मावर्तयासि न इत्याह ।
॥ । ॥ ।
वायुर्वे स्तोता । वायुमेवास्य परस्ताद्–दधात्यावृत्त्यै ॥
यथा वै हिवषो गृहीतस्य स्कन्दिति । एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दिति ।
यदस्योपाकृतस्य लोमानि शीयन्ते । यद्वालेषु काचानावयन्ति ।
लोमान्येवास्य तथ्संभरन्ति ॥ 15 (10)
T.B.3.9.4.5
भूर्भुवस्सुवरिति प्राजापत्या-भिरावयन्ति । प्राजापत्यो वा अश्वः ।
स्वयैवैनं देवतया समर्द्धयन्ति ॥ भूरिति महिषी । भुव इति वावाता ।
सुवरिति परिवृक्ती । एषां ँलोकाना-मभिजित्यै ॥
हिरण्ययाः काचा भवन्ति । ज्योतिर्वै हिरण्यम् । राष्ट्रमश्वमेधः । 16 (10)
T.B.3.9.4.6
ज्योतिश्चैवास्मै राष्ट्रं च समीची दधाति ॥ सहस्रं भवन्ति ।
सहस्रं संमितः सुवर्गो लोकः । सुवर्गस्यं लोकस्या-भिजित्यै ॥
अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पशवः श्रीः क्रामन्ति ।
योऽश्वमेधेन यजते।
```

```
वसवस्त्वा-ऽञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यनिक ।
तेजो वा आज्यम् । तेजो गायत्री । तेजसैवास्मै तेजोऽवरुन्धे । 17 (10)
T.B.3.9.4.7
। । ।
इन्द्रियं त्रिष्टुप् । तेजसैवास्मा इन्द्रियमवरुन्धे ।
_ _ । । । । । । । । अदित्या–स्त्वा–ऽञ्जन्तु जागतेन छन्द्रसेति परिवृक्ती ।
न ॥
तेजो वा आज्यम् । पशवो जगती ।
तेजसैवास्मै पशूनवरुन्धे ॥
पत्नयो-ऽभ्यञ्जन्ति । श्रिया वा एतद् रूपम् । 18 (10)
T.B.3.9.4.8
यत्पत्नयः । श्रिय-मेवास्मिन् तद्दधति ।
नास्मात्तेज इन्द्रियं पशवः श्रीरपक्रामन्ति ॥
लाजी(3)ञ्छाची(3)न्. यशो ममाँ(4) इत्यतिरिक्त-मन्नमश्रायो पाहरन्ति ।
प्रजामेवानादीं कुर्वते ॥
्। । । ।
एतद्देवा अन्नमत्तैत-दन्नमब्दि प्रजापत् इत्याह ।
प्रजायामेवान्नाद्यं दधते ॥
```

```
यदि नावजिघ्रंत् । अग्निः पशुरासीदित्यवं-घ्रापयेत् ।
अवं हैव जिंघ्रति ()॥
आक्रान्. वाजी क्रमैरत्य-क्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी
सधस्थमित्यश्च-मनुमन्त्रयते ।
एषां <sup>*</sup>लोकाना-मभिजित्यै ॥
। । ।
समिद्धो अञ्जन्कृदरं मतीना-मित्यश्वस्या प्रियो भवन्ति
सरूपत्वाय ॥ 19 (13) (परितस्थुष इत्याहे – मे एवास्मै युनक्त्य –
भिजित्यै-भर-न्त्यश्वमेधो - रुन्धे - रूपम् - जिघ्रति त्रीणि च)
(A4)
3.9.5 अनुवाकं 5 - ब्रह्मोद्यनामकः होतुब्राह्मणोस्संवादः
T.B.3.9.5.1
तेजसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन व्यृद्ध्यते । यो-ऽश्वमेधेन यजते ।
होता च ब्रह्मा च ब्रह्मोद्यं वदतः।
। । । । । । । तेजसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेन च समर्द्धयतः ॥ दक्षिणतो ब्रह्मा भवति ।
दक्षिणत आयतनो वै ब्रह्मा । बार्.हस्पत्यो वै ब्रह्मा ।
ब्रह्मवर्चसमेवास्य दक्षिणतो (दक्षिणतो) दधाति ।
```

```
तस्माद्-दक्षिणोऽर्द्धो ब्रह्मवर्चसितरः ॥
उत्तरतो होता भवति । 20 (10)
T.B.3.9.5.2
यूपमिभतो वदतः । यजमानदेवत्यो वै यूपः ।
यजमानमेव तेजसा च ब्रह्मवर्चसेन च समर्द्धयतः ॥
। ।
कि स्वदासीत्-पूर्वचित्ति-रित्याह ।
द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वचित्तिः। 21 (10)
T.B.3.9.5.3
। । । । । । दिवमेव वृष्टिमवरुन्धे ॥ कि । स्विदासीद्-बृहद्वय इत्याह ।
अश्वो वै बृहद्वयः । अश्वमेवावरुन्धे ॥
कि स्वदासीत् - पिशङ्गिलेत्याह । रात्रिवै पिशङ्गिला ।
गित्रमेवावरुन्धे ॥ कि अस्विदासीत् – पिलिप्पिलेत्याह ।
श्रीर्वे पिलिप्पिला । अन्नाद्यमेवावरुन्धे ॥ 22 (10)
```

```
T.B.3.9.5.4
कः स्विदेकाकी चरतीत्याह । असौ वा आदित्य एकाकी चरति ।
तेज एवावरुन्धे ॥ क उ स्विज्ञायते पुनरित्याह ।
चन्द्रमा वै जायते पुनः । आयुरेवावरुन्धे ॥
कि स्विद्धिमस्य भेषजमित्याह ।
अग्निर्वे हिमस्य भेषजम् । ब्रह्मवर्चसमेवावरुन्धे ॥
कि ७ स्विदा – वपनं महदित्याह । 23 (10)
T.B.3.9.5.5
अयं वै लोक आवपनं महत् । अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति ॥
पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्या इत्याह । वेदिवै परोऽन्तः पृथिव्याः ।
वेदिमेवावरुन्धे ॥ पृच्छामि त्वा भुवनस्य नाभिमित्याह ।
यज्ञो वै भुवनस्य नाभिः । यज्ञमेवावरुन्धे ॥
पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वस्य रेत इत्याह ।
सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेतः ()। सोमपीथ-मेवावरुन्थे॥
पृच्छामि वाचः परमं ँव्योमेत्याह । ब्रह्म वै वाचः परमं ँव्योम ।
ब्रह्मवर्चस-मेवावरुन्धे ॥ 24 (14)
```

(होता भवति – वै वृष्टिः पूर्वचित्ति – रन्नाद्यमेवावरुन्धे – महदित्याह - सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेतश्चत्वारि च) (A5) 3.9.6 अनुवाकं 6 -अश्वस्य मृतोपचारः संज्ञपनप्रकारः T.B.3.9.6.1 ा । । । । अप वा एतस्मा-त्प्राणाः क्रामन्ति । योऽश्वमेधेन यजते । ्राणानेवास्मिन्दधाति । नास्मात्प्राणा अपक्रामन्ति ॥ अवन्तीः-स्थावन्ती-स्त्वा-ऽवन्तु । प्रियं त्वा प्रियाणाम् । वर्.षिष्ठमाप्यानाम् । निधीनां त्वा निधिपति 💛 हवामहे वसोम-मेत्याह । अपैवास्मै तद्ध्नुवते । 25 (10) अथो धुवन्त्येवैनम् । अथो न्येवास्मै हुवते ॥ त्रिः परियन्ति । त्रय इमे लोकाः । एभ्य एवैनं लोकेभ्यो धुवते ॥ न्निः पुनः परियन्ति । षट्-थ्संपद्यन्ते । षड्वा ऋतवः । ऋतुभिरेवैनं धुवते ॥ अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रामन्ति । 26 (10)

```
T.B.3.9.6.3
ये यज्ञे धुवनं तन्वते । नवकृत्वः परियन्ति । नव वै पुरुषे प्राणाः ।
प्राणानेवात्मन्दंधते । नैभ्यः प्राणा अपक्रामन्ति ॥
अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति प्रतीमुदानयति । अह्नतैवैनाम् ॥
सुभगे काम्पील-वासिनीत्याह । तप एवैना-मुपनयति ॥
सुवर्गे लोके संप्रोर्ण्वाथा-मित्याह । 27 (10)
T.B.3.9.6.4
सुवर्गमेवैनां लोकं गमयति ॥
आऽहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधमित्याह ।
प्रजा वै पश्वो गर्भः । प्रजामेव पशूनात्मन्धेते ॥
देवा वा अश्वमेधे पवमाने । सुवर्गं लोकं न प्राजानन्न् ।
तमश्चः प्राजानात् । यथ्सूचीभि-रसिपथा-न्कल्पयन्ति ।
सुवर्गस्य लोकस्य प्रज्ञात्यै ॥ गायत्री त्रिष्टुब्जगतीत्याह । 28 (10)
यथा यजुरेवैतत् ॥ त्रय्यः सूच्यों भवन्ति ।
अयस्मय्यो रजता हरिण्यः । अस्य वै लोकस्य रूपमयस्मय्यः ।
--
अन्तरिक्षस्य रजताः । दिवो हरिण्यः । दिशो वा अयस्मय्यः ।
```

```
अवान्तरदिशा रजताः । ऊर्द्ध्वा हरिण्यः ।
दिशं एवास्मैं कल्पयति ()॥
कस्त्वा – छ्यति कस्त्वा विशास्ती – त्याहा हि ्सायै ॥ 29 (11)
(हुवते-क्राम-न्त्यूर्ण्वाथामित्याह-जगतीत्याह-कल्पयत्येकं च) (A6)
3.9.7 अनुवाकं 7 -तत्र मन्त्राः
T.B.3.9.7.1
अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं क्रामित । योऽश्वमेधेन यजते ।
जर्द्ध्वामेना-मुच्छ्रयता-दित्याह । श्रीर्वे राष्ट्रमश्वमेधः ।
।
श्रियमेवास्मै राष्ट्रमूर्द्ध्व-मुच्छ्रयति ॥ वेणुभारं गिरावि-वेत्याह ।
राष्ट्रं वै भारः । राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहति ॥
ा । ।
अथास्या मद्ध्यमेधता–मित्याह । श्रीर्वै राष्ट्रस्य मद्ध्यम् । 30 (10)
T.B.3.9.7.2
श्रियमेवा-वरुन्धे ॥ शीते वाते पुनन्नि-वेत्याह ।
क्षेमो वै राष्ट्रस्य शीतो वातः । क्षेममेवा-वरुन्धे ॥
यद्धरिणी यवमत्तीत्याह । विड्वै हरिणी । राष्ट्रं यवः ।
विशं चैवास्मै राष्ट्रं च समीची दधाति ॥
```

```
न पुष्टं पशु मन्यत इत्याह ।
तस्माद् राजा पशून्न पुष्यति ॥ 31 (10)
T.B.3.9.7.3
शूद्रा यदर्यजारा न पोषाय धनायतीत्याह ।
तस्मा-द्वैशीपुत्रं नाभिषिञ्चन्ते ॥ इयं यका शकुन्तिकेत्याह ।
विड्वै शंकुन्तिका । राष्ट्रमश्वमेधः ।
विशं चैवास्मै राष्ट्रं च समीची दधाति ॥ आहलमिति सर्पतीत्याह ।
॥ -
तस्माद् राष्ट्राय विशः सर्पन्ति ॥
आहतं गभे पस इत्याह । विड्वै गभः । 32 (10)
T.B.3.9.7.4
। ।
राष्ट्रं पसः । राष्ट्रमेव विश्याहन्ति । तस्माद् राष्ट्रं विशं घातुकम् ॥
माता च ते पिता च त इत्याह । इयं वै माता । असौ पिता ।
आभ्यामेवैनं परिददाति ॥ अग्रं वृक्षस्य रोहत इत्याह ।
श्रीर्वे वृक्षस्याग्रम् । श्रियमेवावरुन्धे ॥ 33 (10)
```

#### T.B.3.9.7.5

प्रसुलामीति ते पिता गभे मुष्टिमत्रं स्य-दित्याह । विड्वै गभः ।

ग्रष्ट्रं मुष्टिः । ग्रष्ट्रमेव विश्याहन्ति । तस्माद् ग्रष्ट्रं विश् घातुकम् ॥

अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रामन्ति । ये यज्ञेऽपूतं वदन्ति ।

दिधकाव् णो अकारिषमिति सुरिभ-मतीमृचं वदन्ति ।

प्राणा वै सुर्भयः । प्राणानेवात्मन्दधते () ।

नैभ्यः प्राणा अपक्रामन्ति ॥

आपो हिष्ठा मयोभुव इत्यद्धिर्मार्जयन्ते । आपो वै सर्वा देवताः ।

देवताभिरे-वात्मानं पवयन्ते ॥ 34 (14)

(ग्रष्ट्रस्य मद्ध्यम् – पुष्यति – गभो – रुन्धे – दधते चत्वारि च)

(ति)

### 3.9.8 अनुवाकं 8 -अश्वमेधस्य तत्पशूनां च प्रशंसा

#### T.B.3.9.8.1

प्रजापतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविशत् ।

ा ।

ताभ्यः पुनः संभवितुं नाशक्नोत् । सोऽब्रवीत् । ऋद्ध्नवदिथ्सः ।

यो मेतः पुनः संभरदिति । तं देवा अश्वमेधेनैव समभरत्न् ।

```
ततो वै त आर्द्ध्नुवन्न् । योऽश्वमेधेन यजते ।
प्रजापतिमेव संभरत्यृद्ध्नोति ॥ पुरुषमालभते । 35 (10)
T.B.3.9.8.2
। ।
वैराजो वै पुरुषः । विराज-मेवालभते । अथो अन्नं ँवै विराट् ।
अन्नमेवावरुन्थे ॥ अश्वमालभते । प्राजापत्यो वा अश्वः ।
प्रजापति-मेवालभते । अथो श्रीर्वा एकंशफम् ।
श्रिय—मेवावरुन्धे ॥ गामालंभते । 36 (10)
T.B.3.9.8.3
यज्ञो वै गौः । यज्ञमेवालभते । अथो अन्नं ँवै गौः । अन्नमेवावरुन्धे ॥
अजावी आलंभते भूम्ने । अथो पुष्टिर्वै भूमा । पुष्टिमेवावंरुन्धे ॥
पर्यग्निकृतं पुरुषं चारण्या ७ - श्लोथ् सृजन्त्यहि ्सायै ॥
उभौ वा एतौ पशू आलभ्येते । यश्चावमो यश्च परमः ()।
तेंऽस्योभये यज्ञे बद्धाः । अभीष्टं अभिप्रीताः ।
अभिजिता अभिहुता भवन्ति ॥ नैनं दङ्क्ष्णवः पशवो यज्ञे बद्धाः ।
अभीष्टं अभिप्रीताः । अभिजिता अभिहुता हि ्सन्ति ।
॥ .
योऽश्वमेधेन यजते । य उ चैनमेवं वैद ॥ 37 (18)
```

```
(लभते – गामालभते – परमोऽष्टौ च) (४८)
3.9.9 अनुवाकं 9 - उत्तमेऽहिन प्रशवः
T.B.3.9.9.1
प्रथमेन वा एष स्तोमेन राद्ध्वा । चतुष्टोमेन कृतेनायाना-मुत्तरेऽहन्न् ।
एकवि एशे प्रतिष्ठायां प्रतितिष्ठति ॥
एकविण्शा-त्प्रतिष्ठाया ऋतूनन्वारोहति ।
ऋतवो वै पृष्ठानि । ऋतवः सम्वथ्सरः ।
ा । । । । । ऋतुष्वेव सम्वथ्सरे प्रतिष्ठाय । देवता अभ्यारोहति ।
शक्वरयः पृष्ठं भवन्त्य-न्यदन्य-च्छन्दः ।
अन्येऽन्ये वा एते पशव आलभ्यन्ते । 38 (10)
T.B.3.9.9.2
उतेव ग्राम्याः । उतेवारण्याः । अहरेव रूपेण समर्द्धयति ।
अथो अहं एवैष बलिर्.हिंयते ॥ तदांहुः । अपशवो वा एते ।
यदजा-वयश्चारण्याश्च । एते वै सर्वे पश्चा । यद्गव्या इति ।
गव्यान् पशूनुत्तमेऽहन्नालभते । 39 (10)
```

T.B.3.9.9.3 तेनैवोभयान् पशूनवरुन्धे ॥ प्राजापत्या भवन्ति । । । । अनभिजितस्या-भिजित्यै ॥ सौरीर्नव श्वेतावञा अनूबन्ध्या भवन्ति । अन्तत एव ब्रह्मवर्चसमवरुन्थे ॥ सोमाय स्वराज्ञे-ऽनोवाहा-वनड्वाहाविति द्वन्द्विनः पशूनालभते । अहोरात्राणा-मभिजित्यै ॥ पशुभिर्वा एष व्यृद्ध्यते । ्योऽश्वमेधेन यजते । छगलं कल्माषं किकिदीविं विदीगयमिति त्वाष्ट्रान् पशूनालभते ()। पशुभिरेवात्मान 💇 समर्द्धयति ॥ म्नुभिर्वा एष व्यृद्ध्यते । योऽश्वमेधेन यजते । पिशङ्गा-स्त्रयो वासन्ता इत्यृतु-पशूनालभते । ऋतुभिरे–वात्मान ण् समर्द्धयति ॥ आ वा एष पशुभ्यो वृश्च्यते । ॥ । । ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ योऽश्वमेधेन यजते । पर्यग्निकृता उथ्सृजन्त्यनाव्रस्काय ॥ **४० (18)** (लभ्यन्ते – लभते – त्वाष्ट्रान् पशूनालभतेऽष्टौ च) (A9)

```
3.9.10 अनुवाकं 10 -महिमाभिधानौ प्रहौ
T.B.3.9.10.1
प्रजापति–रकामयत महानन्नादः स्यामिति ।
। । । । ।
स एतावश्वमेधे महिमानावपञ्यत् । तावगृह्णीत ।
ततो वै स महानन्नादो-ऽभवत्।
यः कामयेत महानन्नादः स्यामिति । स एतावश्वमेधे महिमानौ गृह्णीत ।
महानेवान्नादो भवति ॥ यजमानदेवत्या वै वपा । राजा महिमा ।
यद्वपां महिम्नोभयतः परियजति ()।
यजमानमेव राज्येनोभयतः परिगृह्णाति ॥
पुरस्ता-थ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः।
उपरिष्टा-थ्स्वाहाकारा अन्ये ।
न
ते वा एतेऽश्व एव मेद्ध्य उभये–ऽवरुद्ध्यन्ते ।
यद्वपां महिम्नोभयतः परियजति । तानेवोभयान् प्रीणाति ॥ 41 (16)
(परियजति षट्च) (A10)
```

### 3.9.11 <u>अनुवाकं 11 -शरीरहोमाः स्विष्टकृदादयश्च</u>

```
T.B.3.9.11.1
वैश्वदेवो वा अश्वः । तं ँयत्प्राजापत्यं कुर्यात् । या देवता अपिभागाः ।
ता भागधेयेन व्यर्द्धयेत्। देवताभ्यः समदं दद्ध्यात्।
स्तेगान्-द⊌ष्ट्राभ्यां मण्डूका-ञ्जम्भ्ये-भिरिति ।
। । ।
आज्य-मवदानं कृत्वा प्रतिसंख्याय-माहुती-र्जुहोति ।
या एव देवता अपिभागाः । ता भागधेयेन समर्द्धयति ।
न देवताभ्यः समदं दधाति ॥ 42 (10)
T.B.3.9.11.2
चतुर्दशैता-ननुवाकाञ्जुहोत्य-नन्तरित्यै ॥
प्रयासाय स्वाहेति पञ्चदशम् । पञ्चदश वा अर्द्धमासस्य रात्रयः ।
अर्द्धमास्तराः सम्वथ्सर आप्यते ॥ देवासुराः सम्यता आसन्न् ।
॥ । । । । । । । । । । तेऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः । अश्वस्य मेद्ध्यस्य वयमुद्धार–मुद्धरामहै ।
अथैतानभि-भवामेति । ते लोहित-मुदहरन्त ।
ततो देवा अभवत् । 43 (10)
```

#### T.B.3.9.11.3

पराऽसुराः । यथ्स्वष्टकृद्भ्यो लोहितं जुहोति भ्रातृव्याभिभूत्यै । । ॥ ॥ । भवत्यात्मना । पराऽस्य भ्रातृव्यो भवति ॥ गोम्गकण्ठेन प्रथमा-माहुतिं जुहोति । पशवो वै गोमृगः । रुद्रोऽग्निः स्विष्टकृत् । रुद्रादेव पशूनन्तर्दधाति । अथो यत्रैषा–ऽऽहुतिर्. हूयते । न तत्र रुद्रः पशूनभिमन्यते ॥ 44 (10) T.B.3.9.11.4 अश्वराफेन द्वितीया-माहुतिं जुहोति । परावो वा एकशफम् । म् रुद्रोऽग्निः स्विष्टकृत् । रुद्रादेव पशूनन्तर्दधाति । अथो यत्रैषा-ऽऽहुतिर्,हूयते । न तत्र रुद्रः पशूनभिमन्यते ॥ अयस्मयेन कमण्डलुना तृतीयाम् । आहुं तिं जुहोत्या-यास्यों वै प्रजाः । रुद्रोऽग्निः स्विष्टकृत् । रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति ()। अथो यत्रैषा-ऽऽहुतिर्. हूयते। न तत्र रुद्रः प्रजा अभिमन्यते ॥ 45 (12) (दधा – त्यभवन् – मन्यते – प्रजा अन्तर् दधाति हे चं) (A11)

```
3.9.12 अनुवाकं 12 -तदुभयहोममध्यवर्त्यश्चस्तोमीयहोमः
T.B.3.9.12.1
अश्वस्य वा आलंब्धस्य मेध उदंक्रामत् । तदंश्वस्तोमीय-मभवत् ।
। । । । । । यदश्वस्तोमीयं जुहोति । समेधमेवैन-मालभते ॥
आज्येन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधोऽश्वस्तोमीयम्।
मेधेनैवास्मिन् मेधं दधाति ॥ षट्त्रि एं शतं जुहोति ।
षट्त्रि ं शदक्षरा बृहती । 46 (10)
ता यद्भ्यसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात् । पशून्मात्रया व्यर्द्धयेत् ।
षट्त्रिण्रातं जुहोति । षट्त्रिण्रादक्षरा बृहती । बार्.हताः परावः ।
सा पर्जानां मात्रा । पर्जानेव मात्रया समर्द्धयति ॥ 47 (10)
T.B.3.9.12.3
अश्वस्तोमीय एं हुत्वा द्विपदा जुहोति । द्विपाद्वै पुरुषो द्विप्रतिष्ठः ।
तदेनं प्रतिष्ठया समर्द्धयति ॥ तदाहुः ।
अश्वस्तोमीयं पूर्व 🕹 होतव्याँ (3) द्विपदा (3) इति ।
अश्वो वा अश्वस्तोमीयम् । पुरुषो द्विपदाः ।
```

```
अश्वस्तोमीय एं हुत्वा द्विपदा जुहोति । तस्माद्-द्विपाच्चतुष्पादमत्ति ।
अथो द्विपद्येव चतुष्पदः प्रतिष्ठापयति () ॥ द्विपदा हुत्वा ।
नान्यामुत्तरा-माहु तिं जुहुयात् । यदन्यामुत्तरा-माहु तिं जुहुयात् ।
प्र प्रतिष्ठायाश्च्यवेत । द्विपदा अन्ततो जुहोति प्रतिष्ठित्यै ॥ 48 (15)
(बृह – त्यर्द्धयति – स्थापयति पञ्च च) (A12)
3.9.13 अनुवाकं 13 -संवथ्सरानुष्ठानमिष्टीनाम्
T.B.3.9.13.1
प्रजापति–रश्वमेध–मसृजत । सो–ऽस्माथ्सृष्टो–ऽपाक्रामत् ।
तं यज्ञ-क्रतुभि-रन्वैच्छत् । तं यज्ञ-क्रतुभि-र्नान्वविन्दत् ।
तमिष्टिभि-रन्वैच्छत् । तमिष्टिभि-रन्वविन्दत् । तदिष्टीना-मिष्टित्वम् ।
यथ्सं वथ्सर-मिष्टिभि-र्यजते । अश्वमेव तदन्विच्छति ॥
सावित्रियों भवन्ति । 49 (10)
T.B.3.9.13.2
इयं वै संविता। यो वा अस्यां नश्यति यो निलयते।
अस्यां वाव तं विनदन्ति । न वा इमां कश्चनेत्याहुः ।
तिर्यङ्नोर्द्ध्वो-ऽत्येतुमर्हतीति । यथ्सावित्रियो भवन्ति ।
```

```
सवितृ-प्रसूत एवैनमिच्छति ॥
ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परां परावतं गन्तोः ।
यथ्सायं धृतीर्जुहोति । अश्वस्य यत्यै धृत्यै ॥ 50 (10)
T.B.3.9.13.3
यत्प्रातरिष्टिभि-र्यजते । अश्वमेव तदन्विच्छति ।
यथ्सायं धृतीर्जुहोति । अश्वस्यैव यत्यै धृत्यै ।
तस्माथ्सायं प्रजाः क्षेम्या भवन्ति ॥ यत्प्रात-रिष्टिभि-र्यजते ।
अश्वमेव तदन्विच्छति । तस्माद्दिवा नष्टेष एति ॥
यत्प्रातरिष्टिभि-र्यजते सायं धृतीर्जुहोति ।
्
अहोरात्राभ्या-मेवैन-मन्विच्छति ()।
। । । । । अथो अहोरात्राभ्या-मेवास्मै योगक्षेमं कल्पयति ॥ 51 (11)
(भवन्ति – धृत्या – एन मन्विच्छत्येकं च) (A13)
3.9.14 अनुवाकं 14 -तास्विष्टिषु ब्राह्मणराजन्ययोर्गानम्
T.B.3.9.14.1
अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं क्रामति । योऽश्वमेधेन यजते ।
ब्राह्मणौ वींणागाथिनौ गायतः । श्रिया वा एतद् रूपम् । यद्वीणा ।
```

```
श्रिय-मेवास्मि-न्तद्धतः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियमञ्नुते।
वीणाऽस्मै वाद्यते ॥ तदांहुः ।
यदुभौ ब्राह्मणौ गायेताम् । 52 (10)
T.B.3.9.14.2
प्रभ्रञ्ज्ञा-ऽस्माच्छ्रीः स्यात् । न वै ब्राह्मणे श्री रमत इति ।
ण ॥ ॥ ॥
ब्राह्मणोऽन्यो गायेत्। राजन्योऽन्यः।
ण ।
ब्रह्म वै ब्राह्मणः । क्षत्र्र् राजन्यः ।
तथा हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेण चोभयतः श्रीः परिगृहीता भवति ॥
तदाहुः । यदुभौ दिवा गायेताम् । अपास्माद् राष्ट्रं क्रामेत् । 53 (10)
T.B.3.9.14.3
न वै ब्राह्मणे राष्ट्रं रमत इति । यदा खलु वै राजा कामयते ।
ा । । । । । । । । । । । अथ ब्राह्मणं जिनाति । दिवा ब्राह्मणं गायेत् । नक्तं राजन्यः ।
ब्रह्मणो वै रूपमहः । क्षत्रस्य रात्रिः ।
। । । । । । । । । । । । तथा हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेण चोभयतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति ॥
इत्यददा इत्ययजथा इत्यपच इति ब्राह्मणो गायेत्।
॥ ।
इष्टापूर्त वै ब्राह्मणस्य । 54 (10)
```

T.B.3.9.14.4

इष्टापूर्ते – नैवैन ् स समर्द्धयित ॥
इत्यजिना इत्ययुद्ध्यथा इत्यमु ् संग्राम – महिन्निति राजन्यः ।
युद्धं वै राजन्यस्य । युद्धेनैवैन ् स समर्द्धयित ॥
अक्लृप्ता वा एतस्यर्तव इत्याहुः । योऽश्वमेधेन यजत इति ।
तिस्रोऽन्यो गायित तिस्रोऽन्यः । षट्थ्संपद्यन्ते । षड्वा ऋतवः ।
ऋतूनेवास्मै कल्पयतः () ॥ ताभ्या ् स्थ्स्थायाम् ।
अनोयुक्ते च ञते च ददाति । ञ्तायुः पुरुषः ञ्ततेन्द्रियः ।
आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति ॥ 55 (14)
(गायेताम् – क्रामेद् – ब्राह्मणस्य – कल्पयतश्चत्वारि च) (४१४)

## 3.9.15 अनुवाकं 15 - अवभ्थहोमविशेषाः

### T.B.3.9.15.1

सर्वेषु वा एषु लोकेषु मृत्यवोऽन्वायत्ताः ।

तेभ्यो यदाहुतीर्न जुहुयात् । लोके लोक एनं मृत्युर्विन्देत् ।

मृत्यवे स्वाहा मृत्यवे स्वाहेत्यभि पूर्वमाहुती-र्जुहोति ।

लोकाल्लोकादेव मृत्युमवयजते । नैनं लोके लोके मृत्युर्विन्दति ॥

```
यदमुष्मै स्वाहाऽमुष्मै स्वाहेति जुह्नथ्सं चक्षीत ।
बहुं मृत्युमित्रं कुर्वीत । मृत्यवे स्वाहेत्येकस्मा एवैका-ञ्जुहुयात् ।
एको वा अमुष्मिन् ँलोके मृत्युः । 56 (10)
T.B.3.9.15.2
अञ्चनया मृत्युरेव । तमेवामुष्मिन् लोकेऽवयजते ॥
भूणहत्यायै स्वाहेत्यवभृथ आहुतिं जुहोति ।
भ्रूणहत्यामे वा वयजते ॥ तदाहुः । यद्भ्रूणहत्या ऽपात्र्याऽथं ।
कस्माद्-यज्ञेऽपि क्रियत इति ॥
अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहत्याया इत्याहुः ।
भ्रूणहत्या वाव मृत्युरिति ।
यद्भूणहत्यायै स्वाहेत्यवभृथ आहुतिं जुहोति ॥ 57 (10)
T.B.3.9.15.3
मृत्युमे वा हुत्या तर्पयित्वा परिपाणं कृत्वा ।
भ्रूणघ्ने भेषजं करोति ॥ एता ए ह वै मुण्डिभ औदन्यवः ।
भ्रूणहत्यायै प्रायश्चित्तिं वैदाञ्चकार ।
यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण ए हन्ति । सर्वस्मै तस्मै भेषजं करोति ॥
```

```
जुम्बकाय स्वाहेत्यवभृथ उत्तमामाहुतिं जुहोति ।
वरुणो वै जुम्बकः । अन्तत एव वरुण-मवयजते ॥
खलतेर्विक्लिधस्य शुक्लस्य पिङ्गाक्षस्य मूर्द्धञ्जुहोति ( ) ।
एतद्दै वरुणस्य रूपं । रूपेणैव वरुणमवयजते ॥ 58 (12)
(लोके मृत्युर् - जुहोति - मूर्द्धञ्जुहोति हे च) (A15)
3.9.16 अनुवाकं 16 -उपाकरणमन्त्रव्याख्यानादिः
T.B.3.9.16.1
वारुणो वा अश्वः । तं देवतया व्यर्द्धयति । यत्प्राजापत्यं करोति ।
नमो राज्ञे नमो वरुणायेत्याह । वारुणो वा अश्वः ।
स्वयैवैनं देवतया समर्द्धयति ॥ नमोऽश्वाय नमः प्रजापतय इत्याह ।
प्राजापत्यो वा अश्वः । स्वयैवैनं देवतया समर्द्धयति ॥
नमोऽधिपतय इत्याह । 59 (10)
T.B.3.9.16.2
धर्मो वा अधिपतिः । धर्ममेवा-वरुन्धे ॥
अधिपति-रस्यधिपतिं मा कुर्वधिपतिरहं प्रजानां भूयास-मित्याह ।
ा । ।
अधिपति–मेवैनङ् समानानां करोति ॥ मां धेहि मयि धेहीत्याह ।
```

```
आशिषमेवैतामाशास्ते ॥ उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति ।
आलब्धाय स्वाहेति नियुक्ते जुहोति ।
हुताय स्वाहेति हुते जुहोति ।
एषां ँलोकाना-मभिजित्यै ॥ 60 (10)
T.B.3.9.16.3
प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यश्चयवते । योऽश्वमेधेन यजते ।
॥ ॥ ॥
आग्नेय-मैन्द्राग्न-माश्चिनम् । तान् पशूनालभते प्रतिष्ठित्यै ॥
यदाऽग्नेयो भवति । अग्निः सर्वा देवताः । देवता एवावरुन्धे ॥
ब्रह्म वा अग्निः । क्षत्रमिन्द्रः । यदैन्द्राग्नो भवति । ६१ (10)
T.B.3.9.16.4
ब्रह्मक्षत्रे एवावरुन्धे ॥ यदाऽश्विनो भवति । आशिषामवरुद्ध्यै ॥
त्रयो भवन्ति । त्रयं इमे लोकाः । एष्वेव लोकेषु प्रतितिष्ठति ॥
ा । । ।
अग्नये-ऽ्होमुचे-ऽष्टाकपाल इति दशहविषमिष्टिं निर्वपति ।
दशाक्षरा विराट् । अन्नं विराट् । विराजै-वान्नाद्य-मवरुन्धे ( ) ॥
अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस इति याज्यानुवाक्या
भवन्ति सर्वत्वाय ॥ 62 (11)
```

```
(अधिपतय इत्या – हाभिजित्या – ऐन्द्राग्नो भवति – रुन्ध एकं च)
(A16)
3.9.17 अनुवाकं 17 -अश्वस्य रोगादिनिमित्तं प्रायश्चित्तम्
T.B.3.9.17.1
यद्यश्चमुपतपद्विन्देत् । आग्नेय-मष्टाकपालं निर्वपेत् ।
सौम्यं चरुम् । सावित्र-मष्टाकपालम् ॥ यदाग्नेयो भवति ।
ा ॥ ।
अग्निः सर्वा देवताः । देवता-भिरेवैनं भिषज्यति ॥
यथ्सौम्यो भवति । सोमो वा ओषधीना ए राजा ।
याभ्य एवैनं विन्दति । 63 (10)
T.B.3.9.17.2
ताभिरेवैनं भिषज्यति ॥ यथ्सावित्रो भवति ।
स्वितृप्रसूत एवैनं भिषज्यति ॥ एताभिरेवैनं देवताभिर्-भिषज्यति ।
अगदो हैव भवति ॥ पौष्णं चरुं निर्वपेत् । यदि २लोणः स्यात् ।
पूषा वै इलौण्यस्य भिषक् । स एवैनं भिषज्यति ।
अञ्लोणो हैव भवति ॥ 64 (10)
```

```
T.B.3.9.17.3
रौद्रं चरुं निर्विपेत् । यदि महती देवता-ऽभिमन्येत ।
एतद्देवत्यो वा अश्वः । स्वयैवैनं देवतया भिषज्यति ।
अगदो हैव भवति॥
वैश्वानरं द्वादश-कपालं निर्वपेन्मृगाखरे यदि नागच्छेत्।
इयं वा अग्निवैश्वानरः । इयमेवैन-मर्चिभ्यां परिरोधमानयति ।
आ हैव स्त्यमह-र्गच्छिति ॥ यद्यधीयात् । 65 (10)
T.B.3.9.17.4
यजमानो वा अश्वः । अ्हंसा वा एष गृहीतः ।
यस्याश्चो मेधाय प्रोक्षितो – ऽद्ध्येति । यद्ध्होमुचे निर्वपति ।
अंश्हस एव तेन मुच्यते ॥ यजमानो वा अश्वः ।
रेतसा वा एष व्यृद्ध्यते । 66 (10)
T.B.3.9.17.5
यस्याश्चो मेधाय प्रोक्षितो – ऽद्ध्येति । सौर्य 🗸 रेतः ।
यथ्सौर्यं पयो भवति । रेतसैवैन एं स समर्द्धयति ॥
यजमानो वा अश्वः । गर्भैर्वा एष व्यृद्ध्यते ।
```

```
यस्याश्चो मेधाय प्रोक्षितो – ऽद्ध्येति । वायव्या गर्भाः ।
। । । । । । यद्वायव्य आज्यभागो भवति । गभैरेवैन्ं स समर्द्धयति ()॥
अथो यस्यैषा–ऽश्वमेधे प्रायश्चित्तिः क्रियते ।
इष्ट्वा वसीयान् भवति ॥ 67 (12) (विन्द – त्यञ्लोणो हैव भव –
त्यधीया – दृद्ध्यते – गभैरेवैन एं स समर्द्धयति द्वे च) (A17)
3.9.18 अनुवाकं 18 - ब्रह्मौदना उच्यन्ते
T.B.3.9.18.1
तदाहुः । द्वादश ब्रह्मौदनान् थ्स ७ स्थिते निर्वपेत् ।
द्वादशभिर्वेष्टिभि-र्यजेतेति ॥ यदिष्टि-भिर्यजेत ।
च । ॥ । ॥ ॥
उपनामुक एनं यज्ञः स्यात् । पापीया ७स्तु स्यात् ।
आप्तानि वा एतस्य छन्दा ्सि । य ईजानः ।
तानि क एतावदाशु पुनः प्रयुञ्जीतेति ।
्रा
सर्वा वै स⊌स्थिते यज्ञे वागाप्यते । 68 (10)
T.B.3.9.18.2
साऽऽप्ता भवति यातयाम्नी । क्रूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता ।
सा न पुनः प्रयुज्येत्याहुः ॥
```

```
द्वादशैव ब्रह्मौदनान् थ्स ७ स्थिते निर्वपेत् ।
प्रजापतिर्वा ओदनः । यज्ञः प्रजापतिः ।
उपनाम्क एनं यज्ञो भवति ।
न पापीयान् भवति ॥ द्वादंश भवन्ति ।
द्वादश मासाः सम्वथ्सरः ()।
सम्वथ्सर एव प्रतितिष्ठति ॥ 69 (11)
(आप्यते – सम्वथ्सर एकं च) (A18)
3.9.19 अनुवाकं 19 -विभृत्वादिभिः द्वादशभिगृणौरश्चमेधप्रशंसा
T.B.3.9.19.1
एष वै विभूर्नाम यज्ञः । सर्व ् ह वै तत्र विभु भवति ।
- । ।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ एष वै प्रभूर्नाम युज्ञः ।
। । । । । । । सर्वं एं ह वै तत्र प्रभु भवति । यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥
्। । एष वा ऊर्जस्वान्नाम यज्ञः । सर्व्ं ह वै तत्रोर्जस्व–द्भवति ।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ एष वै पयस्वान्नाम यज्ञः । 70 (10)
```

```
T.B.3.9.19.2
।
सर्व ्र ह वै तत्र पयस्व-द्भवति । यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥
एष वै विधृतो नाम यज्ञः । सर्व ं ह वै तत्र विधृतं भवति ।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ एष वै व्यावृत्तो नाम यज्ञः ।
सर्व एं ह वै तत्र व्यावृत्तं भवति । यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥
एष वै प्रतिष्ठितो नाम यज्ञः।
सर्व ् ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति । 71 (10)
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ एष वै तेजस्वी नाम यज्ञः ।
सर्व ् ह वै तत्र तेजस्वि भवति । यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥
एष वै ब्रह्मवर्चसी नाम यज्ञः।
आ ह वै तत्र ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायते । यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥
एष वा अतिव्याधी नाम यज्ञः।
आ ह वै तत्र राजन्यो-ऽतिव्याधी जायते । यत्रैतेन यूज्ञेन यजन्ते ()॥
एष वै दीर्घो नाम यज्ञः । दीर्घायुषो ह वै तत्र मनुष्या भवन्ति ।
यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते ॥ एष वै क्लृप्तो नाम यज्ञः ।
```

## Special Korvai

## 3.9.20 अनुवाकं 20 -अश्वसंज्ञपनप्रकारः

#### T.B.3.9.20.1

```
T.B.3.9.20.2
रुक्मो भवति । सुवर्गस्य लोकस्या-नुख्यात्यै ॥ अश्वो भवति ।
प्रजापते-राप्त्यै ॥ अस्य वै लोकस्य रूपं तार्प्यम् ।
अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः । दिवो हिरण्यकशिपु ।
आदित्यस्य रुक्मः । प्रजापतेरश्वः ।
इममेव लोकं तार्प्येणाप्नोति ()। 74 (10)
T.B.3.9.20.3
अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेन । दिवर्ः हिरण्यकशिपुना ।
आदित्य ् रुक्मेण ।
। । । । । अश्वेनैव मेद्ध्येन प्रजापतेः सायुज्य ् सलोकता – माप्नोति ॥
एतासामेव देवताना एं सायुज्यम्।
सार्षितां ् समान लोकतामाप्नोति ।
॥ । । । योऽश्वमेधेन यजते । य उ चैनमेवं ँवेद ॥ 75 (8)
(अवरुद्ध्या – आप्नोत्य –+ष्टौ च) (A20)
```

### 3.9.21 अनुवाकं 21 -उत्तरवेद्यपवापः

T.B.3.9.21.1 आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्द्धन्त । तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः । ्रा अमुमादित्य–मश्च७ श्वेतं भूतं दक्षिणा–मनयत्र् । तेऽब्रुवत्र् । यं नोऽनेष्ट । स वर्योऽभूदिति । तस्मादश्च ् सवर्येत्या – ह्वयन्ति । तस्माद्यज्ञे वरो दीयते ॥ यत्प्रजापति–रालब्धो–ऽश्वो–ऽभवत् । तस्मादश्वो नाम ॥ 76 (10) T.B.3.9.21.2 यच्छ्वयदरुरासीत् । तस्मादर्वा नाम ॥ यथ्सद्यो वाजान् थ्समजयत् । तस्माद्वाजी नाम ॥ यदस्राणां लोकानादत्त । तस्मादादित्यो नाम ॥ अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतनम् । सूर्यो-ऽग्नेर्योनि-रायतनम् । यदश्वमेधे–ऽग्नौ चित्य उत्तरवेदि–मुपवपति । योनि-मन्तमेवैन-मायतनवन्तं करोति ॥ 77 (10) T.B.3.9.21.3 योनि-मानायतनवान् भवति । स एवं वैद ॥ प्राणापानौ वा एतौ देवानाम् । यदर्काश्वमेधौ ।

```
प्राणापानावेवावरुन्धे ॥ ओजो बलं वा एतौ देवानाम् ।
यदर्काश्वमेधौ । ओजो बलमेवावरुन्धे ॥
अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनि-रायतनम् ।
सूर्यो - ऽग्नेयों नि - रायतनम् ()।
यदश्वमेधे-ऽग्नौ चित्य उत्तरवेदिं चिनोति ।
तावर्काश्वमेधौ । अर्काश्वमेधावेवा वरुन्धे ।
अथो अर्काश्च-मेधयोरेव प्रतितिष्ठति ॥ 78 (14)
(नाम – करोति – सूर्योऽग्नेर्योनिरायतनम् चत्वारि च) (A21)
3.9.22 अनुवाकं 22 -ऋषभालम्भः
T.B.3.9.22.1
प्रजापतिं वै देवाः पितरम् । पशुं भूतं मेधायालभन्त ।
तमालभ्योपावसन्न् । प्रातर्यष्टास्मह इति ।
एकं वा एतद्देवानामहः । यथ्सम् वथ्सरः ।
तस्मादश्वः पुरस्ता-थ्सम् वथ्सर आलंभ्यते ॥
यत्प्रजापति-रालब्धो-ऽश्वोऽभवत् । तस्मादश्वः ।
यथ्सद्यो मेधोऽभवत् । 79 (10)
```

```
T.B.3.9.22.2
तस्मादश्वमेधः ॥ वेदुको-ऽश्वमाशुं भवति । य एवं वेद ॥
यद्वै तत्प्रजापति–रालब्धो–ऽश्वोऽभवत् ।
। । ।
तस्मादश्वः प्रजापतेः पशूना–मनुरूपतमः ॥
आऽस्य पुत्रः प्रतिरूपो जायते । य एवं वैद ॥
सर्वाणि भूतानि संभृत्यालभते ।
समेनं देवा-स्तेजसे ब्रह्मवर्चसाय भरन्ति।
योऽश्वमेधेन यजते । 80 (10)
T.B.3.9.22.3
य उ चैनमेवं वैद ॥ एतद्दै तद्देवा एतां देवताम् ।
पशुं भूतं मेधायालभन्त । यज्ञमेव । यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः ।
कामप्रं यज्ञमं कुर्वत । तेऽमृतत्वमकामयन्त ।
। ॥ । । । । तेऽमृतत्व-मगच्छन्न् ॥ योऽश्वमेधेन यजते ।
देवानामेवा-यनेनैति। 81 (10)
```

```
T.B.3.9.22.4
प्राजापत्येनैव यज्ञेन यजते कामप्रेण । अपुनर्मारमेव गच्छति ॥
एतस्य वै रूपेण पुरस्ता-त्प्राजापत्य-मृषभं तूपरं
बहरूप-मालंभते ।
॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ । सर्वभ्यः कामेभ्यः । सर्वस्याप्त्यै ।
सर्वस्य जित्यै ॥ सर्वमेव तेनाप्नोति । सर्वं जयति ।
॥ । । । ।
योऽश्वमेधेन यजते । य उ चैनमेवं वैद ( ) ॥ 82 (10)
(मेधोऽभवद् – यजत – एति – वेद) (A22)
3.9.23 अनुवाकं 23 - अश्वावयवेषुपासनम्
T.B.3.9.23.1
यो वा अश्वस्य मेद्ध्यस्य लोमनी वेद ।
।
अश्वस्यैव मेद्ध्यस्य लोमं ँलोमञ्जुहोति ।
अहोरात्रे वा अश्वस्य मेद्ध्यस्य लोमनी । यथ्सायं प्रांतर्जुहोति ।
अश्वस्यैव मेद्ध्यस्य लोमं लोमञ्जूहोति ।
एतदनुकृति हस्म वै पुरा। अश्वस्य मेद्ध्यस्य लोमं लोमञ्जुह्नति॥
यो वा अश्वस्य मेद्ध्यस्य पदे वेद ।
```

```
अश्वस्यैव मेद्ध्यस्य पदे पदे जुहोति ।
दर्.शपूर्णमासौ वा अश्वस्य मेद्ध्यस्य पदे । 83 (10)
T.B.3.9.23.2
यद्र्ः शपूर्णमासौ यजते । अश्वस्यैव मेद्ध्यस्य पदे पदे जुहोति ।
। । । । एतदनुकृति ह स्म वै पुरा । अश्वस्य मेद्ध्यस्य पदे पदे जुह्वति ॥
यो वा अश्वस्य मेद्ध्यस्य विवर्तनं वैद ।
अश्वस्यैव मेद्ध्यस्य विवर्तने विवर्तने जुहोति ।
असौ वा आदित्योऽश्वः । स आहवनीय–मागच्छति ।
तद्विवर्तते । यदग्निहोत्रं जुहोति ()।
अश्वस्यैव मेद्ध्यस्य विवर्तने विवर्तने जुहोति ।
एतदनुकृति ह स्म वै पुरा।
अश्वस्य मेद्ध्यस्य विवर्तने विवर्तने जुह्नति ॥ 84 (13)
(पदे – अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणि च) (A23)
```

## तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अश्वमेधं - हर्विधानम् - (TB 3.9)

Prapaataka Korvai with starting Padams of 1 to 23 Anuvaakams :
| प्रजापतिस्तमष्टादिशिभिः – प्रजापतिरकामयतोभा – वस्मै –

| युञ्जन्ति – तेजसा – ऽप प्राणा – अप श्रीरूर्द्ध्वम् – प्रजापतिः

| प्रेणाऽनु – प्रथमेन – प्रजापतिरकामयत महान्. – वैश्वदेवो वा

| अश्वो – ऽश्वस्य – प्रजापतिस्तं यज्ञक्रतुभि – रप श्रीर्ब्राह्मणौ –

| सर्वेषु – वारुणो – यद्यश्वम् – तदाहु – रेष वै विभू –

| स्तार्प्यणा – दित्याः – प्रजापतिं पितरं – यो वा अश्वस्य

| मेद्ध्यस्य लोमनी त्रयोविच्ञातिः)

First and Last Padam 3rd Ashtakam 9th Prapaatakam :-। (प्रजापतिरश्वमेधं – जुह्नति)

## ॥ हरिः ओम् ॥

॥ कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः ॥

#### **Details of Dasini &Vaakyams for**

Ashtakam 3 Prapaatakam 9 (TB 3.9)

| ASHRAMII OTT                   | Dasini | Vaakyams        |
|--------------------------------|--------|-----------------|
| Anuvakam1                      | 4      | 43              |
| Anuvakam 2                     | 4      | 42              |
| Anuvakam 3                     | 3      | 30              |
| Anuvakam 4                     | 8      | 83              |
| Anuvakam 5                     | 5      | 54              |
| Anuvakam 6                     | 5      | 51              |
| Anuvakam7                      | 5      | 54              |
| Anuvakam8                      | 3      | 38              |
| Anuvakam8<br>(as per Grantha)  | 4      | <mark>38</mark> |
| Anuvakam9                      | 3      | 38              |
| Anuvakam 5<br>(as per Grantha) | 4      | 38              |
| Anuvakam10                     | 1      | 16              |
| Anuvakam11                     | 4      | 42              |
| Anuvakam12                     | 3      | 35              |
| Anuvakam13                     | 3      | 31              |
| Anuvakam14                     | 4      | 44              |
| Anuvakam15                     | 3      | 32              |

## तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - अश्वमेधं -हर्विधानम् - (TB 3.9)

| Anuvakam16                | 4  | 41  |
|---------------------------|----|-----|
| Anuvakam17                | 5  | 52  |
| Anuvakam18                | 2  | 21  |
| Anuvakam19                | 3  | 36  |
| Anuvakam20                | 3  | 28  |
| Anuvakam21                | 3  | 34  |
| Anuvakam22                | 4  | 40  |
| Anuvakam23                | 2  | 23  |
| Total →                   | 84 | 908 |
| Total as per grantha book | 86 | 908 |

#### **Count for Ashtakam 3**

|                         | Anuvaakam | Dasini | Vaakyams |
|-------------------------|-----------|--------|----------|
| Prapaatakam1            | 6         | 63     | 657      |
| Prapaatakam2            | 10        | 85     | 873      |
| Prapaatakam3            | 11        | 79     | 823      |
| Prapaatakam4            | 19        | 19     | 187      |
| Prapaatakam5            | 13        | 30     | 343      |
| Prapaatakam6            | 15        | 38     | 387      |
| Prapaatakam7            | 14        | 130    | 1353     |
| Prapaatakam8            | 23        | 91     | 999      |
| Prapaatakam9            | 23        | 84     | 908      |
| Total →                 | 134       | 619    | 6530     |
| Total as per<br>Grantha | 134       | 620    | 6530     |

ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः

श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

## 3.कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं

- 3.10 तैत्तरीय यजुर्बाह्मणे काठके प्रथमः प्रश्नः (सावित्रचयनम्)
- 3.10.1 <u>अनुवाकं 1 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमात्ण्णोपधानं चोच्यते

प्ताः प्राः विज्ञानं प्रज्ञानं जानदिभिजानत् ।

संकल्पमानं प्रकल्पमान-मुपकल्पमान-मुपक्लृप्तं क्लृप्तं ।

श्रेयो वसीय आयथ्संभूतं भूतं ॥ चित्रः केतुः प्रभानाभान्थ् संभान् ।

ज्योतिष्मा ७ – स्तेजस्वानातप ७ – स्तपन्नभितपन्न् ।

ा चनो रोचमानः – शोभनः – शोभमानः कल्याणः ॥

दर्शा दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना ।

आप्यायमाना प्यायमाना – प्याया सूनृतेरा ।

आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूरयन्ती पूर्णा पौर्णमासी ॥

वता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः । 1 (10)

```
T.B.3.10.1.2
———————————————॥
आवेशय–न्निवेशयन्थ्सम् वेशनः सण्शान्तः शान्तः ।
आभवन् प्रभवन् – थ्संभवन् – थ्संभूतो भूतः ॥
प्रस्तुतं विष्टुत्र स्थस्तुतं कल्याणं विश्वरूपं।
शुक्रममृतं तेजस्वि तेजः समिद्धं।
अरुणं भानुमन् मरीचिमदभितपत् तपस्वत् ॥
सविता प्रसविता दीप्तो दीपयन् दीप्यमानः ।
ज्वलं ज्वलिता तपन् वितपन् -थ्सन्तपन्न् ।
रोचनो रोचमानः शुंभूः शुंभमानो वामः ॥
सुता सुन्वती प्रसुता सूयमाना ऽभिषूयमाणा।
पीती प्रपा संपा तृप्ति-स्तर्पयन्ती । 2 (10)
T.B.3.10.1.3
कान्ता काम्या कामजाता ऽऽयुष्मती कामद्रघा ॥
अभिशास्ता ऽनुमन्ता-ऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः ।
आसादयन् निषादयन् –थ्स एसादनः स एसन्नः सन्नः ।
आभू विभूः प्रभूः शंभू भुवः ॥ पवित्रं पवयिष्यन् पूतो मेद्ध्यः ।
```

```
यशो यशस्वा-नायुरमृतः । जीवो जीविष्यन् थ्स्वर्गो लोकः ॥
सहस्वान् थ्सहीया-नोजस्वान् थ्सहमानः।
। ।
जयन्न-भिजयन्-थ्सुद्रविणो द्रविणोदाः ।
आर्द्रपवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः ॥ 3 (10)
T.B.3.10.1.4
अरुणो ऽरुणरंजाः पुण्डरीको विश्वजिदं-भिजित् ।
आर्द्रः पिन्वमानो उन्नवान्-रसंवा-निरावान् ।
सर्वोषधः संभरो महस्वान् ॥ एजत्का जोवत्काः ।
क्षुल्लकाः शिपिविष्टकाः ।
सरिस्त्रराः सुशेरवः । अजिरासो गमिष्णवः ॥
इदानीं तदानी-मेतर्हि क्षिप्रमंजिरं।
आशु र्निमेषः फणो द्रवन्नति-द्रवन् ।
त्वर७ स्त्वरमाण आशुराशीयाञ्जवः {आशुराशीयान् जवः} ()॥
अग्निष्टोम उक्थ्यो ऽतिरात्रो द्विरात्र–स्त्रिरात्र–श्चतूरात्रः ।
अग्निर्. ऋतुः सूर्ये ऋतुश्चन्द्रमा ऋतुः ॥
```

प्रजापतिः सम्वथ्सरो महान्कः ॥ 4 (13) (प्रमोद – स्तर्पयन्ती – प्रमोदो – जवस्त्रीणि च) (A1) 3.10.2 अनुवाकं 2 -अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते T.B.3.10.2.1 भूरिग्नं च पृथिवीं च मां च । त्री ७ श्च लोकान् थ्सम् वथ्सरं च । प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया ऽङ्गिरस्वद्–धुवा सीद ॥ भुवो वायुं चान्तरिक्षं च मां च । त्री ७ श्च लोकान् थ्सम् वथ्सरं च । प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतयाऽ ङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद । स्वरादित्यं च दिवं च मां च । त्री ७ श्च लोकान् थ्सम् वथ्सरं च ( ) । प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया ऽङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद । भूर्भ्वः स्व-श्चन्द्रमसं च दिशश्च मां च। त्री ७ श्च लोकान् थ्संवथ्सरं च । प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया ऽङ्गिर्स्वद् ध्रुवा सीद ॥ 5 (16) (सम्वथ्सरं च षट् चं)(A2)

# 3.10.3 <u>अनुवाकं 3 – अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते

त्वमेव त्वां वैतथ योऽसि सोऽसि । त्वमेव त्वामचैषीः ।
चितश्चासि संचित – श्चास्यग्ने । एतावा ७ श्चासि भूया ७ श्चास्यग्ने ।
यते अग्ने न्यूनं यदु तेऽतिरिक्तं । आदित्या – स्तदंङ्गिरस – श्चिन्वन्तु ।
विश्वे ते देवाश्चिति – मापूरयन्तु । चितश्चासि संचित – श्चास्यग्ने ।
एतावा ७ श्चासि भूया ७ श्चास्यग्ने ।
मा ते अग्ने ऽच्येन माऽति च्येनायुग्गवृक्षि ()।
सर्वेषां ज्योतिषां ज्योति र्यददावुदेति । तपसो जातमनि – भृष्टमोजः।
तत्ते ज्योतिरिष्टके । तेन मे तप । तेन मे ज्वल । तेन मे दीदिहि ।
यावद्देवाः । यावदसाति सूर्यः । यावदुतापि ब्रह्म ॥ 6 (19)
(आवृक्षि नव च) (АЗ)

## 3.10.4 <u>अनुवाकं 4 – अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातण्णोपधानं चोच्यते

```
T.B.3.10.4.1
सम्वथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि । इदावथ्सरोऽसी-दुवथ्सरोऽसि ।
इद्रथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि । तस्यं ते वसन्तः शिरः ।
ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः । वर्.षाः पुच्छं । शरदुत्तरः पक्षः ।
े
हेमन्तो मद्ध्यं । पूर्वपक्षाश्चितयः । अपरपक्षाः पुरीषं । ७ (10)
T.B.3.10.4.2
अहोरात्रा-णीष्टंकाः । ऋषभोऽसि स्वर्गो लोकः ।
यस्यां दिशि महीयसे । ततो नो मह आवह ।
वायु भूत्वा सर्वा दिश आवाहि । सर्वा दिशोऽनु विवाहि ।
सर्वा दिशोऽनु सम् वाहि । चित्त्या चिति – मापृण ।
अचित्त्या चिति–मापृण । चिदिस समुद्रयोनिः । ८ (10)
T.B.3.10.4.3
च्चा । । । । इन्दु र्दक्षः २येन ऋतावा । हिरण्यपक्षः २ाकुनो भुरण्युः ।
महान् थ्सथस्थे ध्रुव आनिषत्तः ।
नमस्ते अस्तु मा मां हि एसीः । एति प्रेति वीति समित्युदिति ।
```

दिवं मे यच्छ । अन्तरिक्षं मे यच्छ । पृथिवीं मे यच्छ ।

पृथिवीं मे यच्छ । अन्तरिक्षं मे यच्छ ( ) । दिवं मे यच्छ ।

अह्रा प्रसारय । रात्र्या समच । रात्र्या प्रसारय । अह्रा समच ।

कामं प्रसारय । काम् र समच ॥ ९ (१७)

(पृरीषर् - समुद्रयोनिः - पृथिवीं मे यच्छान्तरिक्षं मे यच्छ सप्त च)

(A4)

3.10.5 <u>अनुवाकं 5 – अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते

प्रभुंवः स्वः । ओजो बलं । ब्रह्म क्ष्र्यं । यशो महत् ।

सत्यं तपो नाम । रूप-ममृतं । चक्षुः श्रोत्रं । मन् आयुः ।

विश्वं यशो महः । समं तपो हरो भाः ()।

जातवेदा यदि वा पावकोऽसि । वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसि ।

शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकं ।

ऊर्जं पुष्टिं दद-दभ्याववृथ्स्व ॥ 10 (14)

(भाश्वत्वारि च) (А5)

3.10.6 <u>अनुवाकं 6 – अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातण्णोपधानं चोच्यते

T.B.3.10.6.1
राज्ञी विराज्ञी । सम्माज्ञी स्वराज्ञी । अर्चिः शोचिः ।
तपो हरो भाः । अग्नि–रिन्द्रो बृहस्पितः । विश्वे देवा भुवनस्य गोपाः ।
ते मा सर्वे यशसा सं्सृजन्तु ॥ 11 (७)
(राज्ञीन्द्रो मा सप्त (४६)

3.10.7 <u>अनुवाकं 7 – अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते

```
काठके प्रथमः प्रश्नः - (TB 3.10)
```

```
सर्मर्पाय स्वाहा कल्याणाय स्वाहा ()।
अर्जुनाय स्वाहा ॥ 12 (11)
(कल्याणाय स्वाहैक<sup>'</sup> च) (A7)
3.10.8 अनुवाकं 8 -अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं
  स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते
T.B.3.10.8.1
विपश्चिते पवमानाय गायत । मही न धारा ऽत्यन्धों अर्.षति ।
। । । । अहिर्.ह जीर्णामितसर्पति त्वचं । अत्यो न क्रीडन्न सरद्वृषा हिरः ।
ा ।
उपयामगृहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि ।
एष ते योनिर्मृत्यवे त्वा ॥ अप मृत्यु-मपक्षुधं । अपेतः शपथं जिह ।
अधा नो अग्न आवह । रायस्पोष ं सहस्रिणं । 13 (10)
T.B.3.10.8.2
ये ते सहस्रमयुतं पाञाः । मृत्यो मर्त्याय हन्तवे ।
तस्य ते मृत्यु-पीतस्या-मृतवतः । स्वगा-कृतस्य मधुमतः ।
उपहूतस्यो-पहूतो भक्षयामि ॥
मन्द्रा ऽभिभूतिः केतु र्यज्ञानां वाक् । असावेहि । 14 (10)
```

```
T.B.3.10.8.3
अन्धो जागृविः प्राण । असावेहि । बधिर आक्रन्दयित–रपान ।
असावेहि । अहस्तोस्त्वा चक्षुः । असावेहि । अपादाशो मनः ।
असावेहि । कवे विप्रचित्ते श्रोत्र । असावेहि । 15 (10)
T.B.3.10.8.4
सुहस्तः सुवासाः । शूषो नामास्य-मृतो मर्त्येषु ।
तन्त्वाऽहं तथा वेद । असावेहि । अग्निर्मे वाचि श्रितः ।
ा । ।
वाग्घुदये । हृदयं मयि । अहममृते ।
अमृतं ब्रह्मणि । वायुमें प्राणे श्रितः । 16 (10)
T.B.3.10.8.5
प्राणो हृदये । हृदयं मिय । अहममृते । अमृतं ब्रह्मणि ।
सूर्यो मे चक्षुषि श्रितः । चक्षुर्. हृदये । हृदयं मिय । अहममृते ।
अमृतं ब्रह्मणि । चन्द्रमां मे मनसि श्रितः । 17 (10)
T.B.3.10.8.6
मनो हृदये। हृदयं मयि। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि।
अमृतं ब्रह्मणि । आपो मे रेतसि श्रिताः । 18 (10)
```

T.B.3.10.8.7 रेतो हृदये। हृदयं मयि। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर एं हृदये। हृदयं मयि। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि । ओषधिवनस्पतयो मे लोमसु श्रिताः । 19 (10) T.B.3.10.8.8 लोमानि हृदये । हृदयं मयि । अहममृते । अमृतं ब्रह्मणि । इन्द्रो मे बले श्रितः । बल 🗸 हृदये । हृदयं मिय । अहममृते । अमृतं ब्रह्मणि । पर्जन्यो मे मूर्द्ध्नि श्रितः । 20 (10) T.B.3.10.8.9 मूर्द्धा हृदये । हृदयं मयि । अहममृते । अमृतं ब्रह्मणि । ईशानो मे मन्यौ श्रितः । मन्युर्. हृदये । हृदयं मिय । अहममृते । अमृतं ब्रह्मणि । आत्मा म आत्मनि श्रितः() । 21 (10) T.B.3.10.8.10 आत्मा हृदये । हृदयं मयि । अहममृते । अमृतं ब्रह्मणि । पुनर्म आत्मा पुनरायुरागात् । पुनः प्राणः पुनराकूत-मागात् । वैश्वानरो रिमिभ र्वावृधानः । अन्तस्तिष्ठत्वमृतस्य गोपाः ॥ 22 (8) (सहस्रिण – मिहि – श्रोत्रासावेहि – प्राणे श्रितो – मनसि श्रितो – - । रेतसि श्रिता – लोमसु श्रिता – मूर्द्धिन श्रित – आत्मिन श्रितो – - । +ऽष्टौ च) (48)

3.10.9 <u>अनुवाकं 9 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातृण्णोपधानं चोच्यते

T.B.3.10.9.1

प्रजापित र्देवानसृजत । ते पाप्मना संदिता अजायन्त ।

प्रजापित र्देवानसृजत । ते पाप्मना संदिता अजायन्त ।

तान् व्यद्यत् । यद् व्यद्यत् । तस्माद् विद्युत् । तमवृश्चत् ।

यदवृश्चत् । तस्माद् वृष्टिः । तस्माद् यत्रैते देवते अभिप्राप्नुतः ।

विच हैवास्य तत्र पाप्मानन्द्यतः । 23 (10)

T.B.3.10.9.2

वृश्चतश्च ॥ सैषा मीमां ्साऽग्निहोत्र एव संपन्ना । अथो आहुः ।

सर्वेषु यज्ञक्रतुष्विति ॥ होष्यन्नप उपस्पृशेत् ।

बिद्युदिस् विद्यमे पाप्मानमिति । अथ हुत्वोपस्पृशेत् ।

```
वृष्टिरसि वृश्च मे पाप्मानमिति ।
यक्ष्यमाणो वेष्ट्वा वा । वि च हैवास्यैते देवते पाप्मानं द्यतः । 24 (10)
T.B.3.10.9.3
वृश्चतश्च ॥ अत्य ्हो हारुणिः । ब्रह्मचारिणे प्रश्नान् प्रोच्य प्रजिघाय ।
परेहि । प्लक्षं दैयां (दैय्यां) पातिं पुच्छ ।
वेत्थं सावित्रां(3) न वेत्था(3) इति ।
तमागत्य पप्रच्छ । आचार्यो मा प्राहैषीत् ।
वेत्थं सावित्रां(3) न वेत्था(3) इति । सहोवाच वेदेति ॥ 25 (10)
T.B.3.10.9.4
स कस्मिन् प्रतिष्ठित इति । परोरजसीति ।
कस्तद्यत् परोरजा इति । एष वाव स परोरजा इति होवाच ।
य एष तपति । एषो ऽर्वाग्रजा इति । स कस्मिन् त्वेष इति ।
सत्य इति । किं तथ्सत्यमिति । तप इति । 26 (10)
T.B.3.10.9.5
कस्मिन्नु तप इति । बल इति ।
किं तद् बलमिति । प्राण इति ।
मास्म प्राणमित पृच्छ इति माऽऽचार्यो ऽब्रवीदिति होवाच ब्रह्मचारी ॥
                      vedavms@gmail.com
                                                    Page 179 of 263
```

```
सहोवाच प्लक्षो दैयां (दैय्यां) पातिः ।
यद्वै ब्रह्मचारिन् प्राणमत्यप्रक्ष्यः । मूर्द्धा ते व्यपतिष्यत् ।
अहमुत आचार्या – च्छ्रेयान् भविष्यामि ।
यो मा सावित्रे समवादिष्टेति । 27 (10)
T.B.3.10.9.6
तस्माथ् सावित्रे न सम्वदेत ॥
स यो हवै सावित्रं विदुषा सावित्रे सम्वदते।
॥
सहास्मि-ञ्छ्रियं दधाति ।
अनु हवा अस्मा असौ तपञ्छ्रियं मन्यते ।
। । ।
अन्वस्मै श्रीस्तपो मन्यते । अन्वस्मै तपो बलं मन्यते ।
अन्वस्मै बलं प्राणं मन्यते ॥ स यदाह ।
संज्ञानं विज्ञानं दर्.शां दृष्टेति । एष एव तत् ॥ 28 (10)
अथ यदाह । प्रस्तुतं विष्टुत्र स्ता सुन्वतीति । एष एव तत् ॥
एष ह्येव तान्यहानि । एष रात्रयः ॥ अथ यदाह ।
चित्रः केतु र्दाता प्रदाता सविता प्रसविता ऽभिशास्ता ऽनुमन्तेति ।
```

```
एष एव तत्। एष होव तेऽह्नो मुहूर्ताः।
एष रात्रेः ॥ 29 (10)
T.B.3.10.9.8
अथ यदाह । पवित्रं पविषयन्-थ्सहस्वान्-थ्सहीयानरुणो
उरुणरंजा इति । एष एव तत् । एष होव ते ऽर्द्धमासाः ।
एष मासाः ॥ अथ यदाह ।
अग्निष्टोम उक्थ्योऽग्निर्. ऋतुः प्रजापतिः सम्वथ्सर इति ।
एष एव तत्। एष होव ते यज्ञक्रतवः। एष ऋतवः। 30 (10)
____
T.B.3.10.9.9
एष सम्वथ्सरः ॥ अथ यदाह । इदानीं तदानीमिति । एष एव तत् ।
एष होव ते मुहूर्तानां मुहूर्ताः ॥ जनको ह वै देहः ।
अहोरात्रैः समाजगाम । त्रण्होचुः । यो वा अस्मान्. वेद ।
विजहत्-पाप्मानमेति । 31 (10)
T.B.3.10.9.10
सर्व-मायुरेति । अभि स्वर्गं लोकं जयति ।
नास्या-मुष्मिन् लोकेऽन्नं क्षीयत इति ॥ विजहन्द्व वै पाप्मानमेति ।
सर्वमायुरेति । अभि स्वर्गं लोकं जयति ।
```

नास्या-मुष्मिन् ँलोके उन्नं क्षीयते । य एवं वैद ॥ अहीना हाश्वत्थ्यः । सावित्रं वैदां चकार । 32 (10) T.B.3.10.9.11 स हं ह एसो हिरण्मयों भूत्वा । स्वर्गं लोकमियाय । आदित्यस्य सायुज्यं ॥ ह्रथ्सो हवै हिरण्मयो भूत्वा । स्वर्गं लोकमेति । आदित्यस्य सायुज्यं । य एवं वैद ॥ देवभागो ह श्रौतर्.षः । सावित्रं विदां चकार । त्र ह वागदृश्यमाना उभ्युवाच । 33 (10) T.B.3.10.9.12 सर्वम्बत गौतमो वेद। यः सावित्रं वैदेति। स होवाच। ै कैषा वागसीति । अयमह ्सावित्रः । देवाना–मुत्तमो लोकः । गुह्यं महो बिभ्रदिति । एतावति ह गौतमः । यज्ञोपवीतं कृत्वा-ऽधो निपपात । नमो नम इति । 34 (10) T.B.3.10.9.13 स होवाच । मा भैषी गौतम । जितो वै ते लोक इति ॥ तस्माद्ये के च सावित्रं विदुः । सर्वे ते जितलोकाः ॥ स यो हवै सावित्र-स्याष्टाक्षरं पद श्रिया ऽभिषिक्तं वेद ।

```
श्रिया हैवाभिषिच्यते । घृणिरिति द्वे अक्षरें ।
सूर्य इति त्रीणि । आदित्य इति त्रीणि । 35 (10)
T.B.3.10.9.14
।
एतद्वै सावित्र–स्याष्टाक्षरं पद⊌ श्रियाभिषिक्तं । य एवं वैद ।
श्रिया हैवाभिषिच्यते ॥ तदे-तदृचा-ऽभ्युक्तं ।
ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्न् । यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः ।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति । य इत् तिद्वदुस्त इमे समासत इति ॥
न हवा एतस्यर्चा न यजुषा न साम्ना-ऽथीऽस्ति ।
यः सावित्रं ँवेद ॥ 36 (10)
T.B.3.10.9.15
तदेतत् परि यद्देवचक्रं । आर्द्रं पिन्वमान स्वर्गे लोक एति ।
। । ।
विजहद् विश्वा भूतानि संपञ्यत् ॥
अार्द्रो ह वै पिन्वमानः स्वर्गे लोक एति ।
विजहन् विश्वा भूतानि संपञ्यन् । य एवं वैद ॥
श्रूषो हवै वार्ष्णेयः । आदित्येन समाजगाम । तर्ः होवाच ।
एहिं सावित्रं विद्धि ( ) ।
```

अयं वै स्वर्गोऽग्निः पारियष्णु – रमृता – थ्संभूत इति ।

एष वाव स सावित्रः । य एष तपित ।

एहि मां विद्धि । इति हैवैनं तदुवाच ॥ 37 (15)

(द्यतो – द्यतो – वेदेति – तप इति – समवादिष्टेति – तद् – रात्रेर्.

– ऋतवः – एति – चकारो – वाच – नम इत्या – दित्य इति त्रीणि

– सावित्रं वैदं – विद्धि पञ्च च) (49)

3.10.10<u>अनुवाकं 10 –अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातण्णोपधानं चोच्यते

T.B.3.10.10.1

इयं वाव सरघा । तस्या अग्निरेव सारघं मधु । — ॥ — — । । या एताः पूर्वपक्षा-परपक्षयो रात्रयः । ता मधुकृतः ।

```
यान्यहानि । ते मधुवृषाः ।
स यो ह वा एता मधुकृतश्च मधुवृषा ७ श्च वेद ।
ु । । । । । वुर्वन्ति हास्यैता अग्नौ मधु । नास्येष्टापूर्तं धयन्ति ॥
अथ यो न वेद । 38 (10)
T.B.3.10.10.2
न हास्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति । धयन्त्यस्येष्टापूर्तं ॥
यो ह वा अहोरात्राणा-न्नामधेयानि वेद ।
नाहोरात्रेष्वा-र्तिमार्च्छति । संज्ञानं विज्ञानं दर्.शा दृष्टेति ।
एता-वनुवाकौ पूर्वपक्षस्या-होरात्राणां नामधेयानि ।
प्रस्तुतं विष्टुत्र स्ता सुन्वतीति ।
एतावनु-वाकाव-परपक्षस्या-होरात्राणां नामधेयानि ।
नाहोरात्रेष्वा-र्तिमार्च्छति । य एवं वैद ॥ 39 (10)
T.B.3.10.10.3
यो ह वै मुहूर्तानां नामधेयानि वेद । न मुहूर्तेष्वा-र्तिमार्च्छति ।
चित्रः केतु र्दाता प्रदाता संविता प्रसविता उभिशास्ता उनुमन्तेति ।
एतेऽनुवाका मुहूर्तानां नामधेयानि ।
```

न मुहूर्तेष्वा-र्तिमार्च्छति । य एवं वैदं ॥ यो ह वा अर्द्धमासा-नाञ्च मासानाञ्च नामधेयानि वेद । नार्द्धमासेषु न मासेष्वा-र्तिमार्च्छति । पवित्रं पविषयन्-थ्सहस्वान्-थ्सहीयानरुणो ऽरुणरेजा इति । ्। । । । । । । । । एतेऽनुवाका अर्द्धमासानाञ्च मासानाञ्च नामधेयानि । 40 (10) T.B.3.10.10.4 नार्द्धमासेषु न मासेष्वा-र्तिमार्च्छति । य एवं वैद ॥ यो ह वै यज्ञक्रतूनां चर्तूनां च सम्वथ्सरस्य च नामधेयानि वेद । न यज्ञक्रतुषु नर्तुषु न सम्वथ्सर आर्तिमार्च्छति । अग्निष्टोम उक्थ्योऽग्निर्. ऋतुः प्रजापतिः सम्वथ्सर इति । एते उनुवाका यज्ञक्रतूनां चर्तूनां च सम्वथ्सरस्य च नामधेयानि । न यज्ञक्रतुषु नर्तुषु न सम्वथ्सर आर्तिमार्च्छति । य एवं वैद ॥ यो ह वै मुहूर्तानां मुहूर्तान्. वेद । न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्ति मार्च्छति ( ) । 41 (10)

<u>प्राचीं तदानीमिति । एते वै मुहूर्तानां मुहूर्ताः ।</u>
न मुहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्ति – मार्च्छति । य एवं वैद ॥
अथो यथा क्षेत्रज्ञो भूत्वा ऽनु प्रविश्यात्र – मिति ।
एवमेवैतान् क्षेत्रज्ञो भूत्वा ऽनु प्रविश्यात्र – मिति ।
स एतेषामेव सलोकता ् सायुज्य – मश्नुते ।
अप पुनर्मृत्युं जयित । य एवं वैद ॥ 42 (9)
(न वैदै – वं वेदा – नुवाका अर्द्धमासानां च मसानां च नामधेयानि – मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति – +नवं च) (A10)

# 3.10.11 <u>अनुवाकं 11 — अनुवाकेषु नवसु लेखासु नाभ्यां चेष्टकोपधानं</u> स्वयमातण्णोपधानं चोच्यते

```
T.B.3.10.11.1

किश्चिख्वा अस्मा-ल्लोकात् प्रेत्य । आत्मानं वैद ।

अय-मह-मस्मीति । किश्चिथ्स्वं लोकं न प्रति प्रजानाति ॥

अग्निमुग्धो हैव धुमतान्तः । स्वं लोकं न प्रति प्रजानाति ।

अथ् यो हैवैत-मग्निं सावित्रं वैद ।

स एवास्मा ल्लोकात् प्रेत्य । आत्मानं वैद ।

अय-मह-मस्मीति । 43 (10)
```

#### T.B.3.10.11.2

स स्वं लोकं प्रति प्रजानाति ॥ एष उ वेवैनं तथ्सावित्रः ।
स्वर्गं लोक – मभिवहति ॥ अहोरात्रै र्वा इद्ध्ः सयुग्भिः क्रियते ।
इति रात्राया दीक्षिषत । इति रात्राय व्रत – मुपागुरिति ।
तानि हानेवं विदुषः । अमुष्मिन् लोके शेवधिं धयन्ति ।
धीत्र हैव स शेवधि – मनुपरैति ॥
अथ यो हैवैतमग्नि ध्ः सावित्रं वेद । 44 (10)

```
T.B.3.10.11.3
तस्य हैवा-होरात्राणि । अमुष्मिन् लोके शेवधिं न धयन्ति ।
अधीत 💇 हैव स शेवधि-मनुपरैति ॥
भरद्वाजो ह त्रिभिरायुभि ब्रह्मचर्यमुवास ।
त्र ह जीर्णि ७ स्थिवर ए इायानं ।
इन्द्रं उपव्रज्यो वाच । भरद्वाज । यत्ते चतुर्थमायुर्दद्यां ।
किमेनेन कुर्या इति । ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमिति होवाच । 45 (10)
T.B.3.10.11.4
त्र ह त्रीन् गिरि-रूपान विज्ञातानिव दर् शयां चकार ।
तेषा ं है कै कस्मान् मुष्टिनाऽऽददे । स होवाच ।
भरद्वाजेत्यामन्त्र्य । वेदा वा एते । अनन्ता वै वेदाः ।
एतद्वा एतै स्त्रिभि-रायुर्भि-रन्ववोचथाः।
। । ।
अथ त इतर-दननूक्तमेव । एहीमं विद्धि ।
अयं ँवै सर्व विद्येति । 46 (10)
T.B.3.10.11.5
तस्मै हैतमग्निण् सावित्रमुवाच । तण् स विदित्वा ।
अमृतो भूत्वा । स्वर्गं ँलोकमियाय । आदित्यस्य सायुज्यं ॥
```

अमृतों हैव भूत्वा । स्वर्गं ँलोकमेति । आदित्यस्य सायुंज्यं । य एवं वैद ॥ एषो एव त्रयी विद्या । 47 (10) T.B.3.10.11.6 यावन्तर् ह वै त्रय्या विद्यया लोकं जयति । तावन्तं ँलोकं जयति । य एवं वैद ॥ अग्ने वी एतानि नामधेयानि । अग्नेरेव सायुज्य 🗸 सलोकता – माप्नोति । य एवं वैद । वायो र्वा एतानि नामधेयानि । वायोरेव सायुज्य 🗸 सलोकता – माप्नोति । य एवं वैद । इन्द्रस्य वा एतानि नामधेयानि । 48 (10) T.B.3.10.11.7 । । । । । । इन्द्रस्यैव सायुज्य एं सलोकता – माप्नोति । य एवं वैद । बृहस्पते वर्ष एतानि नामधेयानि । बृहस्पतेरेव सायुज्यण् सलोकता-माप्नोति । य एवं वैद । प्रजापते वी एतानि नामधेयानि । प्रजापतेरेव सायुज्य एं सलोकता – माप्नोति । य एवं वैद । ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयानि ।

### काठके प्रथमः प्रश्नः - (TB 3.10)

## 

Prapaataka Korvai with starting Padams of 1 to 10 Anuvaakams :
(संज्ञानं – भू – स्त्वमेव – सम्वथ्सरोऽसि – भू – राज्ञ्य –

। ॥ ॥

सव–विपश्चिते – प्रजापतिर् देवा – नियं वाव सरघा –

। ॥

कश्चिद्धैकादश)

## तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - (TB 3.10)

First and Last Padam 1st Prapaatakam of Kaatakam:-। (संज्ञान⊍् – सावित्रः)

> । ॥ हरिः ओं ॥

॥ इति तैत्तरीय यजुर्बाह्मणे काठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः ॥

काठके प्रथमः प्रश्नः - (TB 3.10)

## 3.10 For Kaatakam 1 - (TB 3.10)

|             | Dasini | Vaakyams |
|-------------|--------|----------|
| Anuvakam 1  | 4      | 43       |
| Anuvakam 2  | 1      | 16       |
| Anuvakam 3  | 1      | 19       |
| Anuvakam 4  | 3      | 37       |
| Anuvakam 5  | 1      | 14       |
| Anuvakam 6  | 1      | 7        |
| Anuvakam 7  | 1      | 11       |
| Anuvakam 8  | 10     | 98       |
| Anuvakam 9  | 15     | 155      |
| Anuvakam 10 | 5      | 49       |
| Anuvakam 11 | 7      | 77       |
| Total →     | 49     | 526      |

ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः

श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

## 3.कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं

## तैत्तरीय यजुर्बाह्मणे काठके द्वितीयः प्रश्नः नाचिकेतचयनम्

### 3.11.1 अनुवाकं 1 -इष्टकोपधानमन्त्राः

T.B.3.11.1.1

लोकोऽसि स्वर्गोऽसि । अनन्तोऽस्य पारोऽसि । अक्षितोऽस्य क्षय्योऽसि । तपसः प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः । । । । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वण् सुभूतं । विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता । तन्त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 1 (10)

T.B.3.11.1.2

तपोऽसि लोके श्रितं । तेजसः प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं। विश्वस्य भर्तृ विश्वस्य जनयितृ । तत् त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं ।

```
प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सींद ॥ 2 (8)
T.B.3.11.1.3
तेजोऽसि तपसि श्रितं । समुद्रस्य प्रतिष्ठा ।
त्वयीदमन्तः । विश्वं ँयक्षं ँविश्वं भूतं ँविश्वर्ं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्तृविश्वस्य जनयितृ । तत् त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं ।
प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सींद ॥ 3 (8)
T.B.3.11.1.4
समुद्रों ऽसि तेजंसि श्रितः । अपां प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व एं सुभूतं।
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता । तं त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं ।
प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-धुवा सीद ॥ ४ (8)
T.B.3.11.1.5
आपः स्थ समुद्रे श्रिताः । पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मासुं ।
इदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्त्यो विश्वस्य जनयित्र्यः ।
```

```
ता व उपदधे कामदुघा अक्षिताः । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
ा ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 5 (8)
T.B.3.11.1.6
पृथिव्य-स्यफ्सु श्रिता । अग्नेः प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं ँयक्षं ँविश्वं भूतं ँविश्वर्ं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्त्री विश्वस्य जनयित्री । तां त्वोपदधे कामदुघा-मक्षितां ।
प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-धुवा सींद ॥ ६ (८)
T.B.3.11.1.7
अग्निरसि पृथिव्या । अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा ।
त्वयीदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व एं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता । तं त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं ।
प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ ७ (८)
T.B.3.11.1.8
अन्तरिक्ष-मस्यग्नौ श्रितं । वायोः प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
्।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं।
विश्वस्य भर्तृ विश्वस्य जनयितृ ।
```

```
तत् त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 8 (8)
T.B.3.11.1.9
वायुरस्यन्तरिक्षे श्रितः । दिवः प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं।
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता ।
तं त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ ९ (८)
T.B.3.11.1.10
द्यौरसि वायौ श्रिता । आदित्यस्य प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
ा ।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व ए सुभूतं।
विश्वस्य भर्त्री विश्वस्य जनयित्री ।
तां त्वोपदधे कामदुघा-मक्षितां । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 10 (8)
T.B.3.11.1.11
आदित्योऽसि दिवि श्रितः । चन्द्रमसः प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व ए सुभूतं।
```

```
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता।
तं त्वोपदधे कामदुघ-मिक्षतं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 11 (8)
T.B.3.11.1.12
चन्द्रमा अस्यादित्ये श्रितः । नक्षेत्राणां प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं ँयक्षं ँविश्वं भूतं ँविश्वं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता ।
। ।
तं त्वोपदधे कामदुघ–मक्षितं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 12 (8)
T.B.3.11.1.13
नक्षत्राणि स्थ चन्द्रमिस श्रितानि । सम्वथ्सरस्य प्रतिष्ठा युष्मासु ।
इदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व ् सुभूतं ।
विश्वस्य भर्तृणि विश्वस्य जनयितॄणि ।
तानि व उपदधे कामदुघा-न्यक्षितानि । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 13 (8)
```

```
T.B.3.11.1.14
सम्वथ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः । ऋतूनां प्रतिष्ठा । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व एं सुभूतं।
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता ।
तं त्वोपदधे कामदुघ-मक्षितं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तयां देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सींद ॥ 14 (8)
T.B.3.11.1.15
ऋतवः स्थ सम्वथ्सरे श्रिताः । मासानां प्रतिष्ठा युष्पासु ।
इदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्तारो विश्वस्य जनयितारः ।
तान्. व उपदधे कामदुघा-नक्षितान् । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 15 (8)
T.B.3.11.1.16
मासाः स्थर्तुषु श्रिताः । अर्द्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासु ।
इदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्व ए सुभूतं ।
विश्वस्य भर्तारो विश्वस्य जनयितारः ।
```

```
तान्. व उपदधे कामदुघा-नक्षितान् । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सींद ॥ 16 (8)
T.B.3.11.1.17
अर्द्धमासाः स्थं मासु श्रिताः । अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासुं ।
इदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्तारो विश्वस्य जनयितारः ।
तान्. व उपदधे कामदुघा-नक्षितान् । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 17 (8)
T.B.3.11.1.18
अहोरात्रे स्थोऽर्द्धमासेषु श्रिते । भूतस्य प्रतिष्ठे भव्यस्य प्रतिष्ठे ।
युवयो-रिदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वर् सुभूतं ।
विश्वस्य भन्न्यौ विश्वस्य जनयित्र्यौ । ते वामुपदधे कामदुघे अक्षिते ।
प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तयां देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सींद ॥ 18 (8)
T.B.3.11.1.19
इदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं ।
विश्वस्य भर्त्यो विश्वस्य जनयित्र्यः ।
```

```
ता व उपदधे कामदुघा-अक्षिताः । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 19 (8)
T.B.3.11.1.20
राडसि बृहती श्रीरसीन्द्रपत्नी धर्मपत्नी । विश्वं भूतमनु प्रभूता ।
त्वयीदमन्तः । विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वर् सुभूतं ।
विश्वस्य भर्त्री विश्वस्य जनयित्री । तां त्वोपदधे कामदुघा-मक्षितां ।
प्रजापतिस्त्वा सादयतु । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 20 (8)
T.B.3.11.1.21
ओजोऽसि सहोऽसि । बलमसि भ्राजोऽसि ।
देवानां धामामृतं । अमर्त्य-स्तपोजाः । त्वयीदमन्तः ।
विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं।
विश्वस्य भर्ता विश्वस्य जनयिता ।
तं त्वोपदधे कामदुघ-मिक्षतं । प्रजापतिस्त्वा सादयतु ।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सींद ( ) ॥ 21 (10)
```

लोक - स्तप - स्तेजः - समुद्र - आपः - पृथिव्य - ग्नि रन्तरिक्षम् - वायुर् - द्यौ - रादित्य - श्वन्द्रमा - नक्षत्राणि सम्बन्ध्सर - ऋतवो - मासा - अर्द्धमासा - अहोरात्रे पौर्णमासी - राड - स्योजोऽस्येकविङ्ज्ञतिः (A1)

```
Special Korvai
लोकोऽसि भर्ता तम् । तपस्तेजोऽसि भर्तृ तत् ।
समुद्रोऽसि भर्ता तम् । आपः स्थ भर्त्र्यस्ता वः ।
पृथिवी भर्त्री ताम्।
अग्निरसि भर्ता तम् । अन्तरिक्षं भर्तृ तत् । वायुरसि भर्ता तम् ।
द्यौरसि भर्त्री ताम् ।
आदित्यश्चन्द्रमा भर्ता तम् । नक्षत्राणि स्थ भर्तृणि तानि वः ।
सम्वथ्सरोऽसि भर्ता तम्।
ऋतवो मासा अर्द्धमासा भर्तारस्तान्. वः ।
अहोरात्रे भन्यौ ते वाम् । पौर्णमासी भर्त्यस्ता वः ।
राडसि भर्त्री ताम् । ओजोऽसि भर्ता तमेकविञ्ञातिः ।
```

```
3.11.2 अनुवाकं 2 -चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहृतीर्जुहोति
T.B.3.11.2.1
त्वमंग्ने रुद्रो असुरो महो दिवः । त्व ए शर्द्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे ।
त्वं वातैररुणैर्यासि शंगयः । त्वं पूषा विधतः पासि नु तमना ।
देवा देवेषु श्रयद्ध्वं । प्रथमा द्वितीयेषु श्रयद्ध्वं ।
द्वितीया-स्तृतीयेषु श्रयद्ध्वं । तृतीया-श्चतुर्थेषु श्रयद्ध्वं ।
चतुर्थाः पञ्चमेषु श्रयद्ध्वं । पञ्चमाः षष्ठेषु श्रयद्ध्वं । 22 (10)
T.B.3.11.2.2
षष्ठाः सप्तमेषु श्रयद्ध्वं । सप्तमा अष्टमेषु श्रयद्ध्वं ।
अष्टमा नवमेषु श्रयद्ध्वं । नवमा दशमेषु श्रयद्ध्वं ।
दशमा एकादशेषु श्रयद्ध्वं । एकदशा द्वादशेषु श्रयद्ध्वं ।
द्वादशा-स्त्रयोदशेषु श्रयद्ध्वं ।
त्रयोदशा-श्रेतुर्दशेषु श्रयद्ध्वं । चतुर्दशाः पञ्चदशेषु श्रयद्ध्वं ।
पञ्चदशाः षोडशेषुं श्रयद्ध्वं । 23 (10)
T.B.3.11.2.3
षोड्याः सप्तद्शेषु श्रयद्ध्वं । सप्तद्शा अष्टादशेषु श्रयद्ध्वं ।
अष्टादशा एकान्नवि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
```

```
एकान्नवि एशा वि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
विण्शा एकविण्शेषु श्रयद्ध्वं ।
एकवि एशा द्वावि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
द्वावि एशा स्त्रयोवि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
त्रयोवि एशा श्चतुर्वि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
चतुर्वि एशाः पञ्चवि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
पञ्चिविण्शाः षड्विण्शेषु श्रयद्ध्वं । 24 (10)
T.B.3.11.2.4
षड्विण्शाः सप्तविण्शेषु श्रयद्ध्वं ।
सप्तवि एशा अष्टावि एशेषु श्रयद्ध्वं ।
अष्टावि एशा एकान्नित्र एशेषु श्रयद्ध्वं ।
एकाननिश्चा स्त्रिश्रोषु श्रयद्ध्वं।
त्रिण्शा एकत्रिण्शेषु श्रयद्ध्वं ।
एकत्रिण्ञा द्वात्रिण्शेषु श्रयद्ध्वं ।
द्वात्रि ्शा स्त्रयस्त्रि ्शेषु श्रयद्ध्वं ।
देवास्त्रिरे-कादशा स्त्रिस्त्रयस्त्रि एशाः।
```

```
उत्तरे भवत । उत्तर वर्त्मान उत्तर सत्वानः ()।
।
यत्काम इदं जुहोमि। तन्मे समृद्ध्यतां।
वय७ स्याम पतयो रयीणां । भूर्भुवस्वः स्वाहा ॥ 25 (14)
(षष्ठेषु श्रयद्धवर् – षोडशेषु श्रयद्धवर् – षड्विर्शेषु श्रयद्ध्व –
मुत्तरसत्वानश्चत्वारि च) (A2)
3.11.3 अनुवाकं 3 -चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति
T.B.3.11.3.1
अग्नाविष्णू सजोषसा । इमा वर्द्धन्तु वाङ्गिरः ।
द्युम्नै र्वाजेभि–रागतं । राज्ञी विराज्ञी । सम्राज्ञी स्वराज्ञी ।
अर्चिः शोचिः । तपो हरो भाः । अग्निः सोमो बृहस्पतिः ।
विश्वे देवा भुवनस्य गोपाः । ते सर्वे सङ्गत्य ()।
इदं मे प्रावता वचः । वय स्याम् पतयो स्यीणां ।
भूर्-भुवस्-स्वस् स्वाहा ॥ 26 (13)
।
(सङ्गत्य त्रीणि च) (A3)
```

## 3.11.4 अनुवाकं 4 -चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति

```
T.B.3.11.4.1
अन्नपते उन्नस्य नो देहि । अनमीवस्य शुष्मिणः ।
। । ।
प्रप्रदातारन्तारिषः । ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ।
अग्ने पृथिवीपते । सोम वीरुधां पते । त्वष्टः समिधां पते ।
विष्णवाशानां पते । मित्र सत्यानां पते । वरुण धर्मणां पते । 27 (10)
T.B.3.11.4.2
मरुतो गणानां पतयः । रुद्र पशूनां पते । इन्द्रौजसां पते ।
बृहस्पते ब्रह्मणस्पते । आ रुचा रोचेऽह७ स्वयं ।
रुचा रुरुचे-रोचमानः । अतीत्यादः स्वराभरेह ।
ा । ।
तस्मिन्. योनौ प्रजनौ प्रजायेय । वय७ स्याम पतयो रयीणां ।
भूर्भुवः स्वः स्वाहा ( ) ॥ 28 (10)
्रा
[वरुण धर्मणां पते स्वः – स्वाहा ( ) ] (A4)
3.11.5 अनुवाकं 5 -चतुर्भिरनुवाकैः चतस्र आहुतीर्जुहोति
T.B.3.11.5.1
सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वाः ।
सप्तर्षयः सप्तधाम प्रियाणि । सप्त होत्रा अनु विद्वान् ।
```

```
सप्त योनी-रापृणस्वा घृतेन । प्राची दिक् । अग्नि र्देवता ।
अग्नि ए स दिशां देवं देवताना – मृच्छतु । यो मैतस्यै
दिशो ऽभिदासति । दक्षिणा दिक् । इन्द्रो देवता । 29 (10)
T.B.3.11.5.2
इन्द्र ए स दिशां देवं देवताना – मृच्छतु ।
यो मैतस्यै दिशो ऽभिदासति । प्रतीची दिक् । सोमो देवता ।
सोम 💇 स दिशां देवं देवताना – मृच्छतु ।
यो मैतस्यै दिशो ऽभिदासति । उदीची दिक् । मित्रावरुणौ देवता ।
मित्रावरुणौ स दिशां देवौ देवताना-मृच्छत् ।
यो मैतस्यै दिशो ऽभिदासति । 30 (10)
T.B.3.11.5.3
ऊर्द्ध्वा दिक् । बृहस्पति देवता ।
बृहस्पति एं स दिशां देवं देवताना – मृच्छतु ।
यो मैतस्यै दिशो ऽभिदासति । इयन्दिक् । अदिति र्देवता ।
।
अदिति एं स दिशां देवीं देवताना – मृच्छतु ।
```

```
यो मैतस्यै दिशों अभदासति।
पुरुषो दिक् । पुरुषो मे कामान् थ्समर्ब्धयतु ( ) । 31 (10)
T.B.3.11.5.4
अन्धो जागृविः प्राण । असावेहि । बधिर आक्रन्दयित–रपान ।
असावेहि । उषसं-मुषस-मशीय । अहमसो ज्योतिरशीय ।
अहमसो ऽपोशीय । वय । स्याम पतयो रयीणां ।
भूर्भुवः स्वः स्वाहा ॥ 32 (9)
(दक्षिणा दिगिन्द्रो देवता – मित्रावरुणौ स दिशां देवौ देवतानामृच्छतु
यो मैतस्यै दिशोऽभिदा – सत्यर्द्धयतु – +नव च) (A5)
3.11.6 अनुवाकं 6 -उपस्थानम्
T.B.3.11.6.1
यत्तेऽचितं यदु चितन्ते अग्ने । यत्त ऊनं यदु तेऽतिरिक्तं ।
आदित्यास्त-दङ्गिरस-श्चिन्वन्तु । विश्वे ते देवाश्चिति-मापूरयन्तु ।
चितश्चासि सञ्चितश्चा-स्यग्ने । एतावा ७ श्चासि भूया ७ श्वास्यग्ने ॥
लोकं पृण च्छिद्रं पृण । अथो सीद शिवा त्वं ।
इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः । अस्मिन्. योनावसीषदन्न् । 33 (10)
```

```
T.B.3.11.6.2
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ ता अस्य सूददोहसः ।
सोम 🖟 श्रीणन्ति पृश्नयः । जन्मं देवानां विशः ।
त्रिष्वा रोचने दिवः । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥
अग्ने देवा एं इहावह । जज्ञानो वृक्त बर्.हिषे ।
असि होता न ईड्यः ॥ अगन्म महा मनसा यविष्ठं । 34 (10)
T.B.3.11.6.3
यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे । चित्रभानू रोदसी अन्तरुवी ।
स्वाहुतं विश्वतः प्रत्यञ्चं ॥ मेधाकारं विदयस्य प्रसाधनं ।
अग्नि एं होतारं परिभूतमं मितं । त्वामर्भस्य हिवषः समानिमत् ।
त्वां महो वृणते नरो नान्यं – त्वत् ॥ मनुष्वत्त्वा निधीमहि ।
मनुष्वथ् समिधीमहि । अग्ने मनुष्व-दङ्गिरः । 35 (10)
T.B.3.11.6.4
देवान् देवायते यज ॥ अग्निर्. हि वाजिनं विशे ।
ददाति विश्वचर.षणिः।
अग्नी राये स्वाभुवं । स प्रीतो याति वार्यं । इष७ स्तोतृभ्य आभर ॥
पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्यां । पृष्टो विश्वा ओषधी-राविवेश ।
```

```
वैश्वानरः सहसा पृष्टो अग्निः।
स नो दिवा स रिषः पातु नक्तं ( ) ॥ 36 (10)
[असीषदन्. – यविष्ठ – मङ्गिरो – नक्तं ( ) ] (A6)
3.11.7 अनुवाकं 7 -नाचिकेतब्राह्मणं तत्र आग्निदेवतोपासनम्
T.B.3.11.7.1
अयं वाव यः पवते । सोऽग्नि र्नाचिकेतः । स यत् प्राङ् पवते ।
ा ।
तदस्य शिरः । अथ यद् दक्षिणा । स दक्षिणः पक्षः ।
—
अथ यत् प्रत्यक् । तत् पुच्छं । य दुदङ्ङ् । स उत्तरः पक्षः । 37 (10)
T.B.3.11.7.2
अथ यथ् सम्वाति । तदस्य समञ्चनं च प्रसारणं च ।
अथों संपदेवास्य सा ॥ सर् ह वा अस्मै स कामः पद्यते ।
यत् कामो यजते । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते ।
य उ चैन-मेवं वैद ॥ यो ह वा अग्ने र्नाचिकेतस्यायतनं
प्रतिष्ठां वैद । आयतनवान् भवति । गच्छति प्रतिष्ठां । 38 (10)
T.B.3.11.7.3
।
हिरण्यं वा अग्ने र्नाचिकेतस्यायतनं प्रतिष्ठा । य एवं वेद ।
आयतनवान् भवति । गच्छति प्रतिष्ठां ॥
```

```
यो ह वा अग्ने र्नाचिकेतस्य शरीरं वैदं।
स शंरीर एव स्वर्गं लोकमेति।
ि।
हिरण्यं ँवा अग्ने र्नाचिकेतस्य शरीरं।
य एवं वैद । स शरीर एव स्वर्गं लोकमेति ॥
अथो यथा रुक्म उत्-तप्तो भाय्यात् । 39 (10)
T.B.3.11.7.4
———। । । । । । । ।
एवमेव स तेजसा यशसा। अस्मि⊌श्च लोके—ऽमुष्मि⊌श्च भाति॥
उरवो ह वै नामैते लोकाः । ये-ऽवरेणादित्यं ।
अर्थ हैते वरीया ्सो लोकाः । ये परेणादित्यं ।
।
अन्तवन्तर्ं ह वा एष क्षय्यं ँलोकं जयति । यो–ऽवरेणादित्यं ।
अथ हैषो-ऽनन्त-मपार-मक्षय्यं ँलोकं जयति ।
यः परेणादित्यं ( ) ॥ ४० (१०)
T.B.3.11.7.5
अनन्तर्ं ह वा अपार-मक्षय्यं ँलोकं जयति ।
॥ । । । । । । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन–मेवं वैद ॥
अथो यथा रथे तिष्ठन् पक्षसी पर्या-वर्त्तमाने प्रत्यपेक्षते ।
```

एव-महोरात्रे प्रत्यपेक्षते । । ॥ । । । नास्या-होरात्रे लोकमाप्नुतः । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन-मेवं वैद ॥ **४१ (८)** *(उत्तरः पक्षो – गच्छति प्रतिष्ठां –* भाय्याद् – यः परेणादित्य – +मष्टौ च) (A7) 3.11.8 अनुवाकं 8 -नाचिकेतोपाख्यानम् T.B.3.11.8.1 उञ्चन्. ह वै वाजश्रवसः सर्ववेदसं ददौ । ्। । । । । । । । दक्षिणासु नीयमानासु श्रद्धा ऽऽविवेश । स होवाच । तत कस्मै मां दास्यसीति । द्वितीयं तृतीयं ॥ त्र्ं ह परीत उवाच । ग् मृत्यवे त्वा ददामीति ॥ तङ् ह स्मोत्थितं ँवागभिवदति । **42 (10)** T.B.3.11.8.2 गौतम कुमारमिति । स होवाच । परेहि मृत्यो र्गृहान् । मृत्यवे वै त्वाऽदा-मिति ॥ तं वै प्रवसन्तं गन्तासीति होवाच । ा । । तस्य स्म तिस्रो रात्री-रनाश्चान् गृहे वसतात् । स यदि त्वा पृच्छेत् ।

```
कुमार कति रात्री-रवाथ्सी-रिति । तिस्र इति प्रति ब्रूतात् ।
किं प्रथमा⊍् रात्रिं-माञ्ना इति । 43 (10)
T.B.3.11.8.3
प्रजां त इति । किं द्वितीया-मिति । पश्र्भ्स्त इति ।
किं तृतीया–मिति । साधुकृत्यां त इति ॥ तं वै प्रवसन्तं जगाम ।
। । । । । । तस्य ह तिस्रो रात्री-रनाश्चान् गृह उवास । तमागत्य पप्रच्छ ।
कुमार कित रात्री-रवाथ्सी-रिति । तिस्र इति प्रत्युवाच । 44 (10)
T.B.3.11.8.4
किं प्रथमा⊎़ रात्रि–माञ्चा इति । प्रजां त इति ।
किं द्वितीया–मिति । पञ्र्⊌स्त इति । किं तृतीया–मिति ।
साधुकृत्यां त इति ॥ नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच ।
न् वरं वृणीष्वेति ॥ पितरमेव जीवन्नयानीति ॥
द्वितीयं वृणीष्वेति । 45 (10)
T.B.3.11.8.5
इष्टापूर्तयो में ऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच।
तस्मै हैतमग्निं नाचिकेत-मुवाच।
ततो वै तस्ये-ष्टापूर्ते ना क्षीयेते ॥
```

नास्येष्टा-पूर्ते क्षीयेते । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन-मेवं वैद ॥ तृतीयं वृणीष्वेति । पुन मृत्यो में ऽपजितिं ब्रूहीति होवाच। तस्मै हैतमग्निं नाचिकेत-मुवाच। ततो वै सोऽप पुन मृत्यु-मजयत् । 46 (10) T.B.3.11.8.6 अप पुन मृत्युं जयति । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते ॥ य उ चैन-मेवं वैद ॥ प्रजापति वै प्रजाकाम-स्तपो-ऽतप्यत । स हिरण्य-मुदास्यत् । त-दग्नौ प्रास्यत् । त-दस्मै नाच्छदयत् । तद् द्वितीयं प्रास्यत् । त-दस्मै नै वाच्छदयत् । तत् तृतीयं प्रास्यत् । 47 (10) T.B.3.11.8.7 त-दस्मै नै वाच्छदयत् । त-दात्म-न्नेव हृदय्येऽग्नौ वैश्वानरे प्रास्यत् । त-दस्मा अच्छदयत् । तस्माब्धिरण्यं कनिष्ठं धनानां । भुञ्जत् प्रियतमं । हृदयज्ं हि । स वै तमेव नाविन्दत् । यस्मै तां दक्षिणा-मनेष्यत् ।

```
ता 🗸 स्वायैव हस्ताय दक्षिणायानयत् ।
तां प्रत्यगृह्णात् । 48 (10)
दक्षाय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णामीति । सो ऽदक्षत दक्षिणां प्रतिगृह्य ।
दक्षते ह वै दक्षिणां प्रतिगृह्य । य एवं वैद ॥
एतद्ध स्म वै तद् विद्वा ्सो वाजश्रवसा गोतमाः।
अप्यन्देश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णन्ति ।
उभयेन वयं दक्षिष्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्येति ।
ते ऽदक्षन्त दक्षिणां प्रतिगृह्य ।
दक्षते ह वै दक्षिणां प्रतिगृह्य । य एवं वैद ()।
प्र हान्यं ँव्लीनाति ॥ 49 (11)
(वद – त्याञ्ना इत् – युवाच – द्वितीयं वृणीष्वे – त्यजयत् –
तृतीयं प्रास्य – दगृह्णाद् – य एवं वैदैकं च) (A8)
```

#### 3.11.9 अनुवाकं 9 –चयनप्रयोगः

```
T.B.3.11.9.1
```

```
त्र हैत-मेके पशुबन्ध एवोत्तरवेद्यां चिन्वते ।
उत्तरवेदिसम्मित एषोऽग्निरिति वदन्तः ।
तन्न तथा कुर्यात् । एत-मग्निं कामेन व्यर्द्धयेत् ।
स एनं कामेन व्यृद्धः । कामेन व्यर्द्धयेत् ।
सौम्ये वावै नमध्वरे चिन्वीत । यत्र वा भूयिष्ठा आहुतयो हूयेरत्र् ।
एत-मग्निं कामेन समर्द्धयति । स एनं कामेन समृद्धः । 50 (10)
T.B.3.11.9.2
कामेन समर्द्धयति ॥ अथं हैनं पुरर्.षयः ।
उत्तरवेद्या-मेव सत्रिय-मचिन्वत । ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजां ।
अभि स्वर्गं ँलोक-मजयत्र् । विन्दतं एव प्रजां ।
अभि स्वर्गं लोकं जयति । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते ।
य उ चैन-मेवं वैद ॥ अथं हैनं वायुर्. ऋद्धिकामः । 51 (10)
T.B.3.11.9.3
यथान्युप्त-मेवोपदधे । ततो वै स एता-मृद्धि-मार्द्ध्नोत् ।
यामिदं वायुर्. ऋद्धः । एता-मृद्धि-मृद्ध्नोति ।
```

```
यामिदं वायुर्. ऋद्धः । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते ।
य उ चैन-मेवं वैद ॥ अथ हैनं गोबलो वार्ष्णः पशुकामः ।
्। । । ॥
पांक्तमेव चिक्ये । पञ्च पुरस्तात् । 52 (10)
T.B.3.11.9.4
पञ्च दक्षिणतः । पञ्च पश्चात् । पञ्चोत्तरतः । एकां मद्ध्ये ।
ततो वै स सहस्रं पशून् प्राप्नोत् । प्र सहस्रं पशू-नाप्नोति ।
ग ।
योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन–मेवं वैद ॥
अथ हैनं प्रजापति र्ज्यैष्ठ्यकामो यशस्कामः प्रजननकामः।
निवृतमेव चिक्ये । 53 (10)
सप्त पुरस्तात् । तिस्रो दक्षिणतः । सप्त पश्चात् । तिस्र उत्तरतः ।
एकां मद्ध्ये । ततो वै स प्र यशो ज्यैष्ठ्य-माप्नोत् ।
एतां प्रजातिं प्राजायत । यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते ।
त्रिवृद् वै ज्यैष्ठ्यं । माता पिता पुत्रः । 54 (10)
T.B.3.11.9.6
त्रिवृत् प्रजननं । उपस्थो योनि र्मद्ध्यमा ।
प्रयशो ज्यैष्ठ्य-माप्नोति । एतां प्रजातिं प्रजायते ।
```

यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । । । । य उ चैनमेवं वैद ॥ अथ हैन–मिन्द्रो ज्यैष्ठ्यकामः । ऊर्द्ध्वा एवोपदधे । ततो वै स ज्यैष्ठ्य-मगच्छत् । 55 (10) ज्यैष्ठ्यं गच्छति । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन-मेवं वैद ॥ अथ हैन-मसावादित्यः स्वर्गकामः । प्राचीरेवोपदधे । ततो वै सोऽभि स्वर्गं लोक-मजयत् । अभि स्वर्गं लोकं जयति । योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन-मेवं वैद ॥ स यदीच्छेत् । 56 (10) T.B.3.11.9.8 तेजस्वी यशस्वी ब्रह्मवर्चसी स्यामिति । प्राङा होतुर्द्धिष्णया-दुथ्सर्पेत् । येयं प्रागाद् यशस्वती । सा मा प्रोणीतु । तेजसा यशसा ब्रह्मवर्चसेनेति । तेजस्व्येव यशस्वी ब्रह्मवर्चसी भवति ॥ अथ यदीच्छेत् । भूयिष्ठं मे श्रद्दधीरत्र् । भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति ।

दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाज्यस्य स्वाहेति सुवेणो-पहत्या हवनीये जुहुयात् । 57 (10) T.B.3.11.9.9 भूयिष्ठ-मेवास्मै श्रद्दंधते । भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति ॥ पुरीष-मुपधाय । चिति-क्लृप्तिभि-रभिमृश्य । अग्निं प्रणीयोपसमाधाय । चतस्र एता आहुती र्जुहोति । त्वमग्ने रुद्र इति शतरुद्रीयस्य रूपं। अग्ना-विष्णू इति वसोर्द्धारायाः । अन्नपत इत्यन्न होमः । सप्त ते अग्ने समिधः सप्त जिह्वा इति विश्वप्रीः ( ) ॥ 58 (10) दिच्छे - जुहुयाद - विश्वप्रिः ( ) ] (A9)

Special Korvai

। । । ।
(पुरर्.षयो वायुर् गोबलः सहस्रं प्रजापति स्त्रिवृदिन्द्रो

।
ऽसावादित्यः स यदीच्छेत् )

```
3.11.10<u>अनुवाकं 10 –तत्प्रशंसा</u>
```

```
T.B.3.11.10.1
यां प्रथमा-मिष्टका-मुपदधाति । इमं तया लोक-मभि जयति ।
अथो या अस्मिन् ँलोके देवताः ।
तासाण् सायुज्यण् सलोकता-माप्नोति । यां द्वितीया-मुपदधाति ।
अन्तरिक्षलोकं तया-ऽभि जयति । अथो या अन्तरिक्ष लोके देवताः ।
तासा ् सायुं ज्य ् सलोकता – माप्नोति ।
यां तृतीया-मुपदधाति ।
अमुं तया लोक-मभिजयति । 59 (10)
T.B.3.11.10.2
अथो या अमुष्मिन् लोके देवताः ।
तासाण् सायुज्यण् सलोकता-माप्नोति ।
अथो या अम्रितरा अष्टादेश ।
य एवामी उरवंश्च वरीया एसश्च लोकाः।
तानेव ताभि-रभिजयति ॥
कामचारो ह वा अस्योरुषु च वरीयस्सु च लोकेषु भवति।
```

```
योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । य उ चैन-मेवं वैद ॥
सम्वथ्सरो वा अग्नि र्नाचिकेतः । तस्य वसन्तः शिरः । 60 (10)
T.B.3.11.10.3
ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः । वर्.षा उत्तरः । शरत् पुच्छं ।
मासाः कर्मकाराः । अहोरात्रे शतरुद्रीयं । पर्जन्यो वसोर्द्धारा ।
यथा वै पर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा ।
प्रजाभ्यः सर्वान् कामान्थ् संपूरयति ।
एव-मेव स तस्य सर्वान् कामान्थ् संपूरयति ।
॥
योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते । 61 (10)
T.B.3.11.10.4
य उ चैन-मेवं वैद ॥ सम्वथ्सरो वा अग्नि नीचिकेतः ।
तस्य वसन्तः शिरः । ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः ।
वर्.षाः पुच्छं । शरदुत्तरः पक्षः । हेमन्तो मद्ध्यं ।
पूर्वपक्षाश्चितयः । अपरपक्षाः पुरीषं । अहोरात्राणीष्टकाः ( ) ।
एष वाव सोऽग्नि-रंग्निमयः पुनर्णवः ।
अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा । स्वर्गं लोक-मेति ।
```

## तैत्तिरीय ब्राह्मणम् - (TB 3.11)

आदित्यस्य सायुज्यं। योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते।

य उ चैन-मेवं वैद ॥ 62 (16) (अमुं तया लोकमभिजयति – शिर –

शिनुत – इष्टकाः षट्च) (A10)

 Prapaataka Korvai with starting Padams of 1 to 10 Anuvaakams : 

 (लोक - स्त्वमग्ने - उग्नाविष्णू - अन्नपते - सप्त ते अग्ने 

 यत्ते ऽचितम - यं ँवा - वोशन्. ह वै - तं हैतं - ँयां

 ।
 ।

 ।
 ।

 प्रथमामिष्ठकां दश)

| Korvai with starting Padams of 1, 11, 21 Series of Dasinis :| (लोक - आदित्य - ओजो - ऽस्यूर्द्ध्वा दिग - नन्तर्ं ह वै | ।
| कामेन - ग्रीष्मो द्विषष्टिः)

First and Last Padam 2nd Prapaatakam of Kaatakam:-(लोको – वेद)

> । ॥ हरिः ओं ॥

॥ तैत्तरीय यजुर्बाह्मणे काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः ॥

\_\_\_\_\_

काठके द्वितीयः प्रश्नः - (TB 3.11)

## 3.11 For Kaatakam - 2 (TB 3.11)

|             | Dasini | Vaakyams |
|-------------|--------|----------|
| Anuvakam 1  | 21     | 172      |
| Anuvakam 2  | 4      | 44       |
| Anuvakam 3  | 1      | 13       |
| Anuvakam 4  | 2      | 39       |
| Anuvakam 5  | 4      | 20       |
| Anuvakam 6  | 4      | 40       |
| Anuvakam 7  | 5      | 48       |
| Anuvakam 8  | 8      | 81       |
| Anuvakam 9  | 9      | 90       |
| Anuvakam 10 | 4      | 46       |
| Total →     | 62     | 593      |

## ओं नमः परमात्मने, श्री महागणपतये नमः

श्री गुरुभ्यो नमः, हरिः ओं

- 3. कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय ब्राह्मणे तृतीयाष्टकं
- 3.12 तैत्तरीय यजुर्बाह्मणे काठके तृतीयः प्रक्नः

चातुर्होत्रचयनं वैश्वसृजचयनं च

3.12.1 अनुवाकं 1 -वैश्वसृजचयनाङ्गभूताः दिवरुरयेनय इष्टयः

```
"तुभ्यन्ता अङ्गिरस्तमा{21}" "श्याम तङ्गाममग्ने {22}"।

"आशानां त्वा{23}" "विश्वा आशाः{24}"।

"अनु नोऽद्यानुमिति{25}" "रिन्विदनुमते त्वं{26}"।

"कामो भूतस्य{27}" "कामस्तदग्रे{28}"।

"ब्रह्म जज्ञानं{29}" "पिता विराजां{30}"।

"यज्ञो रायो{31}" "ऽयं यज्ञः{32}"। "आपो भद्रा{33}"

"आदित्पश्यामि{34}"। "तुभ्यं भरिन्ति{35}" "यो देहाः{36}"।

"पूर्वं देवा अपरेण{37}" "प्राणापानौ{38}"।

"हव्यवाह ⊌{39}" "स्विष्टं{40}"॥ 1 (10) तुभ्यं दश (А1)
```

## 3.12.2 <u>अनुवाकं 2 –तासां ब्राह्मणम्</u>

T.B.3.12.2.1 देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत् । ते प्रजापति-मब्रुवन्न् । प्रजापते स्वर्गी वै नो लोकस्तिरोऽभूत् । तमन्विच्छेति । तं यज्ञक्रतुभि-रन्वैच्छत् । तं यज्ञक्रतुभि-र्नान्वविन्दत् । तमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तमिष्टिभि-रन्वविन्दत्। तदिष्टीना-मिष्टित्वं । एष्ट्यो हवै नाम । ता इष्टय इत्याचक्षते परोक्षेण । परोक्ष प्रिया इव हि देवाः ॥ 2 (12) T.B.3.12.2.2 तमाशा-ऽब्रवीत् । प्रजापत आशया वै श्राम्यसि । अहमु वा आशाऽस्मि । मां नु यजस्व । अथ ते सत्याऽऽशा भविष्यति । अनु स्वर्गं ँलोकं वैथ्स्यसीति । स एतमग्नये कामाय पुरोडाशं-मष्टाकंपालं निरंवपत् । आशायै चरुं । अनुमत्यै चरुं । ततो वै तस्य सत्या-ऽऽशा ऽभवत् । अनु स्वर्गं ँलोक-मविन्दत् । सत्या ह वा अस्याशा भवति । अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।

```
य उ चैनदेवं वैद ॥ सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा – ऽऽशायै स्वाहा ।
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 3 (19)
T.B.3.12.2.3
तं कामोऽब्रवीत् । प्रजापते कामेन वै श्राम्यसि ।
अहमुवै कामोऽस्मि । मां नु यजस्व ।
अथ ते सत्यः कामो भविष्यति । अनु स्वर्गं लोकं वैथ्स्यसीति ।
स एतमग्नये कामाय पुरोडाश-मष्टाकपालं निरवपत् । कामाय चुरुं ।
अनुमत्यै चरुं । ततो वै तस्य सत्यः कामोऽभवत् ।
अनु स्वर्गं लोकमविन्दत् । सत्यो ह वा अस्य कामो भवति ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उ चैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा कामाय स्वाहा ।
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ ४ (19)
```

```
T.B.3.12.2.4
मां नु यजस्व । अथं ते ब्रह्मण्वान्. यज्ञो भविष्यति ।
अनु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति ।
स एतमग्नये कामाय पुरोडाश-मष्टाकपालं निरवपत् ।
ब्रह्मणे चरुं । अनुमत्यै चरुं । ततो वै तस्य ब्रह्मण्वान्. यज्ञोऽभवत् ।
अनु स्वर्गं लोकमविन्दत् । ब्रह्मण्वान्. ह वा अस्य यज्ञो भवति ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहा ।
ा ॥ । ॥ ॥ अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 5 (19)
T.B.3.12.2.5
तं यज्ञोऽब्रवीत् । प्रजापते यज्ञेन वै श्राम्यसि । अहमु वै यज्ञोऽस्मि ।
मां नु यजस्व । अथं ते सत्यो यज्ञो भविष्यति ।
अनु स्वर्गं ँलोकं वैथ्स्यसीति ।
```

```
स एतमग्नये कामाय पुरोडाश-मष्टाकपालं निरवपत्।
यज्ञायं चरुं । अनुमत्यै चरुं । ततो वै तस्यं सत्यो यज्ञोऽभवत् ।
अनु स्वर्गं लोकमविन्दत् । सत्यो ह वा अस्य यज्ञो भवति ।
अन् स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा यज्ञाय स्वाहा ।
ाः ॥ । ॥ ॥
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ ६ (19)
T.B.3.12.2.6
तमापों – ऽब्रुवन्न् । प्रजापते ऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः ।
वयमु वा आपस्स्मः । अस्मानु यजस्व ।
अथ त्विय सर्वे कामाः श्रियष्यन्ते । अनु स्वर्गं लोकं वैथ्स्यसीति ।
स एतमग्नये कामाय पुरोडाश-मष्टाकपालं निरवपत् । अद्भ्यश्चरुं ।
अनुमत्यै चरुं। ततो वै तस्मिन्थ्-सर्वे कामा अश्रयन्त।
अनु स्वर्गं लोकमविन्दत् । सर्वे ह वा अस्मिन् कामाः श्रयन्ते ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
```

```
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा ऽद्भ्यः स्वाहा ।
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ ७ (19)
T.B.3.12.2.7
तमग्नि र्बलिमानब्रवीत्।
प्रजापते उग्नये वै बलिमते सर्वाणि भूतानि बलि एं हरन्ति ।
अहम् वा अग्नि बिलिमानस्मि । मां नु यजस्व ।
ा । ।
अथ ते सर्वाणि भूतानि बलिण् हरिष्यन्ति ।
अनु स्वर्गं लोकं वैथ्स्यसीति।
स एतमग्नये कामाय पुरोडाश-मष्टाकपाल-न्निरवपत् ।
अग्नये बलिमते चरुं । अनुमत्यै चरुं ।
ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बलि-महरन्न्।
अनु स्वर्गं ँलोकमविन्दत्।
सर्वाणि ह वा अस्मै भूतानि बलिण् हरन्ति ।
```

```
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा ऽग्नये बलिमते स्वाहा ।
ा ॥ । ॥ ॥
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 8 (19)
T.B.3.12.2.8
तमनुवित्तिर-ब्रवीत् । प्रजापते स्वर्गं वै लोकमनु-विविथ्ससि ।
अहमु वा अनुवित्तिरस्मि । मां नु यजस्व ।
अथं ते सत्या उनुवित्ति-भीविष्यति । अनु स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति ।
स एतमग्नये कामाय पुरोडाश-मष्टाकपालं निरवपत् । अनुवित्त्यै चरुं ।
अनुमत्यै चरुं । ततो वै तस्य सत्या ऽनुवित्तिरभवत् ।
अनु स्वर्गं ँलोक-मविन्दत् । सत्या ह वा अस्यानुवित्ति-र्भवति ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये कामाय स्वाहा-ऽनुवित्त्यै स्वाहा ।
ा ॥ । ॥ ॥
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
```

```
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ ९ (19)
T.B.3.12.2.9
ता वा एताः सप्त स्वर्गस्य लोकस्य द्वारः ।
्रा । । ॥ ॥ ।
दिवः रथेनयो ऽनुवित्तयो नाम । आशा प्रथमा ुरक्षति ।
कामो द्वितीयां । ब्रह्म तृतीयां । यज्ञश्चतुर्थीं । आपः पञ्चमीं ।
अग्नि र्बलिमान्-थ्यष्ठीं । अनुवित्तिः सप्तमीं ।
अनु ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति ।
कामचारोऽस्य स्वर्गे लोके भवति । य एताभि-रिष्टिभि-र्यजते ।
। ।
य उचैना एवं वैद । तास्विन्विष्टि । पष्टौही वरां दद्यात् कुं सञ्च ।
स्त्रियै चाभारण समृद्ध्यै ॥ 10 (16)
(No Korvai for Anuvaakam 2)
3.12.3 <u>अनुवाकं 3 –उपाघा नामेष्टयः</u>
T.B.3.12.3.1
तपसा देवा देवता-मग्र आयन्न् । तपसर्.षयः स्वरन्वविन्दन्न् ।
तपसा सपतान् प्रणुदामारातीः । येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति ॥
प्रथमजं देव ए हविषा विधेम । स्वयंभु ब्रह्म परमं तपो यत् ।
स एव पुत्रः स पिता स माता । तपो ह यक्षं प्रथम ए संबभूव ॥
```

```
श्रद्धया देवो देवत्व-मञ्नुते । श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्य देवी । 11 (10)
T.B.3.12.3.2
्। । । । । । ।
सा नो जुषाणोप यज्ञ–मागात् । कामवथ्सा ऽमृतं दुहाना ॥
शब्द्रा देवी प्रथमजा ऋतस्य । विश्वस्य भर्त्री जगतः प्रतिष्ठा ।
ता अद्धा ं हिवषा यजामहे । सा नो लोक – ममृतं दधातु ।
्रांचा देवी भुवनस्याधिपत्नी ॥ आगाथ्सत्य ुंहविरिदं जुषाणं ।
यस्माद्देवा जिज्ञरे भुवनञ्च विश्वे ।
तस्मै विधेम हिवषा घृतेन । 12 (10)
T.B.3.12.3.3
यथां देवैः संधमादं मदेम ॥ यस्य प्रतिष्ठो-र्वन्तरिक्षं ।
यस्मादेवा जिज्ञरे भुवनञ्च सर्वे ।
ा । । ।
तथ्सत्य-मर्चदुपयज्ञं न आगात् । ब्रह्माहुती-रुपमोदमानं ॥
मनसो वशे सर्वमिदं बभूव।
नान्यस्य मनो वशमन्वियाय ।
भीष्मो हि देवः सहसः सहीयान् ।
स नो जुषाण उप यज्ञमागात्॥
```

आकृतीना-मधिपतिं चेतसां च । 13 (10) T.B.3.12.3.4 सङ्कल्पजूतिं देवं विपश्चिं। मनो राजानमिह वर्द्धयन्तः। ्। । । । उपहवे उस्य सुमतौ स्याम ॥ चरणं पवित्रं विततं पुराणं । येन प्रतस्तरति दुष्कृतानि । तेन पवित्रेण शुद्धेन पूताः । अति पाप्मान-मरातिं तरेम ॥ लोकस्य द्वार-मर्चिमत् पवित्रं । ज्योतिष्मद् भ्राजमानं महस्वत् । अमृतस्य धारा बहुधा दोहमानं ()। चरणं नो लोके सुधितां दधातु ॥ "अग्नि मूर्द्धा{41}" "भुवः{42}" ॥ "अनु नोऽद्यानुमति{43}" "रन्विदनुमतेत्वं{44}" ॥ "हव्यवाह ⊌{45}" ''स्विष्टं{46}" ॥ 14 (14) (देवी – घृतेन – चेतसां च – दोहमानं चत्वारि च) (A3) 3.12.4 अनुवाकं 4 -तासां ब्राह्मणम् T.B.3.12.4.1 देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरो ऽभवत् । ते प्रजापति-मब्रुवन्न् । प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत् । तमन्विच्छेति । तं यज्ञक्रतुभि-रन्वैच्छत् । तं यज्ञक्रतुभि र्नान्वविन्दत् ।

तमिष्टिभि-रन्वैच्छत् । तमिष्टिभि-रन्वविन्दत् । तदिष्टीना-मिष्टित्वं । एष्टयो ह वै नाम । ता इष्टय इत्या चक्षते परोक्षेण । परोक्षप्रिया इव हि देवाः ॥ 15 (12) T.B.3.12.4.2 तं तपोऽ ब्रवीत् । प्रजापते तपसा वै श्राम्यसि । अहमु वै तपोऽ स्मि । मां नु यजस्व । अथ ते सत्यं तपो भविष्यति । अनु स्वर्गं ँलोकं वैथ्स्यसीति । स एतमाग्नेय-मष्टाकपालं निरवपत् । तपसे चरुं । अनुमत्यै चरुं। ततो वै तस्य सत्यं तपो ऽभवत्। अनु स्वर्गं लोकमविन्दत् । सत्य ए ह वा अस्य तपो भवति । अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते । य उ चैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति । अग्नये स्वाहा तपसे स्वाहा । । । ॥ । ॥ अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा । स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 16 (19)

```
T.B.3.12.4.3
अहमु वै श्रद्धाऽस्मि । मां नु यजस्व ।
अथ ते सत्या श्रद्धा भविष्यति । अनु स्वर्गं लोकं वैथ्स्यसीति ।
स एतमाऽग्नेय-मष्टाकपालं निरवपत् । श्रद्धायै चरुं ।
अनुमत्यै चरुं। ततो वै तस्य सत्या श्रद्धाऽभवत्।
अनु स्वर्गं ँलोकमविन्दत् । सत्या ह वा अस्य श्रद्धा भवति ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उ चैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति । अग्नये स्वाहा श्रद्धायै स्वाहा ।
ा ॥ । ॥ ॥ ॥
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 17 (19)
T.B.3.12.4.4
त्रं सत्य-मंब्रवीत् । प्रजापते सत्येन वै श्राम्यसि ।
अहमु वै सत्यमस्मि । मां नु यजस्व ।
अथ ते सत्य ् सत्यं भविष्यति । अनु स्वर्गं ँलोकं वैथ्स्यसीति ।
स एतमाऽग्नेय-मष्टाकपालं निरवपत् । सत्यायं चरुं ।
```

```
अनुमत्यै चरुं । ततो वै तस्य सत्य 🗸 सत्यमभवत् ।
अनु स्वर्गं ँलोकमिवन्दत् । सत्य 💛 ह वा अस्य सत्यं भवति ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति । अग्नये स्वाहा सत्याय स्वाहा ।
ा ॥ । ॥ ॥
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 18 (19)
T.B.3.12.4.5
तं मनोऽब्रवीत् । प्रजापते मनसा वै श्राम्यसि ।
अहमु वै मनोऽस्मि । मां नु यजस्व ।
अथ ते सत्यं मनो भविष्यति । अनु स्वर्गं ँलोकं वैथ्स्यसीति ।
स एतमाऽग्नेय-मष्टाकपालं निरवपत् । मनसे चरुं ।
अनुमत्यै चरुं। ततो वै तस्य सत्यं मनोऽभवत्।
अनु स्वर्गं ँलोकमविन्दत् । सत्य ् ह वा अस्य मनो भवति ।
अनु स्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैन देवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
अग्नये स्वाहा मनसे स्वाहा ।
```

```
अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 19 (19)
T.B.3.12.4.6
तं चरण-मब्रवीत् । प्रजापते चरणेन वै श्राम्यसि ।
अहमु वै चरणमस्मि । मां नु यजस्व ।
अथ ते सत्यं चरणं भविष्यति । अनु स्वर्गं ँलोकं वैथ्स्यसीति ।
स एतमाऽग्नेय-मष्टाकपालं निरवपत् । चरणाय चरुं ।
अनुमत्यै चरुं। ततो वै तस्य सत्यं चरणमभवत्।
अनु स्वर्गं ँलोकमविन्दत् । सत्य 🕹 ह वा अस्य चरणं भवति ।
अनुस्वर्गं लोकं विन्दति । य एतेन हविषा यजते ।
य उचैनदेवं वैद । सोऽत्र जुहोति ।
। ॥ । ॥ । ॥ । ॥ अग्नये स्वाहा चरणाय स्वाहा । अनुमत्यै स्वाहा प्रजापतये स्वाहा ।
स्वर्गाय लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति ॥ 20 (19)
T.B.3.12.4.7
ता वा एताः पञ्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारः ।
अपाघा अनुवित्तयो नाम । तपः प्रथमा् रक्षति ।
```

```
श्रद्धा द्वितीयां । सत्यं तृतीयां । मनश्चतुर्थीं । चरणं पञ्चमीं ।
अनु ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति।
कामचारोऽस्य स्वर्गे लोके भवति । य एताभि-रिष्टिभि-र्यजते ।
य उचैना एवं वैद ।
तास्वन्विष्टि । पष्टौही वरां दद्यात् क एसञ्च ।
स्त्रिये चाभार ् समृद्ध्यै ॥ 21 (14)
(No Korvai for Anuvaakam 4)
3.12.5 अनुवाकं 5 -चातुर्होत्रचयनम्
T.B.3.12.5.1
ब्रह्म वै चतुर्.होतारः । चतुर्.होतृभ्योऽधि यज्ञो निर्मितः ।
। । । ।
नैन्थ् शप्तं । नाभिचरित-मागच्छति । य एवं वैद ॥
यो ह वै चतुर्.होतृणां चतुर्.होतृत्वं वैद ।
अथो पञ्च होतृत्वं । सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते ।
वाचस्पतिर्. होता दशहोतृणां । पृथिवी होता चतुर्.होतृणां । 22 (10)
T.B.3.12.5.2
अग्निर्. होता पञ्चहोतृणां । वाग्घोता षड्ढोतृणां ।
महाहविर्. होता सप्तहोतॄणां। एतद्वै चतुर्.होतृणां चतुर्.होतृत्वं।
```

```
अथो पञ्चहोतृत्वं । सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते । य एवं वैद ॥
एषा वै संव विद्या। एतद् भेषजं।
एषा पड्किः स्वर्गस्य लोकस्यां जसायनिः स्रुतिः । 23 (10)
T.B.3.12.5.3
एतान्. योऽद्ध्यै-त्यछदिर्दर्.शे यावत्तरसं । स्वरेति ।
अनपब्रवः सर्वमायुरेति । विन्दते प्रजां । रायस्पोषं गौपत्यं ।
ब्रह्मवर्चसी भवति ॥ एतान्. योऽद्ध्यैति । स्पृणोत्यात्मानं ।
प्रजां पितृन् ॥ एतान्. वा अरुण औपवेशि र्विदाञ्चकार । 24 (10)
T.B.3.12.5.4
एतैरधिवादमपाजयत् । अथो विश्वं पाप्मानं ।
स्वर्ययौ । एतान्. योऽद्ध्यैति । अधिवादं जयति ।
। ॥ ।
अथो विश्वं पाप्मानं । स्वरेति ॥
एतैरग्निं चिन्वीत स्वर्गकामः।
एतैरायुष्कामः । प्रजा पशुकामो वा ॥ 25 (10)
T.B.3.12.5.5
पुरस्ता-द्दर्शहोतार-मुदञ्च-मुपदधाति यावत्पदं।
हदयं यज्षी पल्यौ च । दक्षिणतः प्राञ्चं चतुर्.होतारं ।
```

```
पश्चादुदञ्चं पञ्च होतारं । उत्तरतः प्राञ्च 🗸 षड्ढोतारं ।
उपरिष्टात् प्राञ्चण् सप्तहोतारं । हृदयं यजूण्षि पत्यश्च ।
यथावकाशं ग्रहान् । यथावकाशं प्रतिग्रहान् ँलोकं पृणाश्च ।
सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टा भवन्ति । 26 (10)
T.B.3.12.5.6
सदेवमुग्निं चिनुते ॥ रथसंमित-श्चेतव्यः । वज्रो वै रथः ।
वजेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्य 🗸 स्तृणुते । पक्षः संमित – श्चेतव्यः ।
एतावान्. वै रथः । यावत्पक्षः । रथसंमितमेव चिनुते ॥
इममेव लोकं पशुबन्धेनाभिजयति । अथो अग्निष्टोमेन । 27 (10)
T.B.3.12.5.7
अन्तरिक्ष-मुक्थ्येन । स्वरतिरात्रेण । सर्वान् "लोकानहीनेन ।
अथो सन्नेण ॥ वरो दक्षिणा । वरेणैव वर<sup>७</sup> स्पृणोति ।
आत्मा हि वरः ॥ एकवि ्शति दक्षिणा ददाति ।
एकवि ए्ञो वा इतः स्वर्गो लोकः । प्रस्वर्गं ँलोकमाप्नोति । 28 (10)
T.B.3.12.5.8
असावादित्य एकवि एकाः । अमुमेवा – दित्यमाप्नोति ॥
शतं ददाति । शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः ।
```

```
आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति ॥ सहस्रं ददाति ।
सहस्र संमितः स्वर्गो लोकः । स्वर्गस्य लोकस्या-भिजित्यै ॥
अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति । सर्वाणि वया एसि । 29 (10)
T.B.3.12.5.9
सर्वस्याप्त्यै । सर्वस्या–वरुद्ध्यै ॥ यदि न विन्देत ।
यस्मै कामाया-ग्निश्चीयते ॥ पष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात् ।
सा हि सर्वाणि वयां स्सि । सर्वस्याप्त्यै । सर्वस्या-वरुद्ध्यै ॥ 30 (10)
T.B.3.12.5.10
हिरण्यं ददाति । हिरण्य-ज्योतिरेव स्वर्गं ँलोकमेति ॥
वासो ददाति । तेनायुः प्रतिरते ॥ वेदितृतीये यजेत ।
निषत्या हि देवाः । स सत्यमग्निं चिनुते ॥
। । । । । । तदेतत् पशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात् । नेतरेषु यज्ञेषु ॥
यो ह वै चतुर्.होतृ-ननुसवनं तर्पयितव्यान्. वेद । 31 (10)
T.B.3.12.5.11
तृप्यति प्रजया पशुभिः । उपैन ए सोमपीथो नमति ।
एते वै चतुर्.होतारो ऽनुसवनं तर्पयितव्याः । ये ब्राह्मणा बहुविदः ।
```

```
तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत् । दुरिष्टं स्यात् । अग्निमस्य वृञ्जीरन्न् ।
तेभ्यो यथा श्रद्धं दद्यात् । स्विष्टमेवैतित्क्रियते ।
नास्याग्निं वृञ्जते ॥ 32 (10)
T.B.3.12.5.12
। । । । । । । हिरण्येष्टको भवति । यावदुत्तम-मङ्गलि-काण्डं यज्ञ परुषा संमितं ।
तेजो हिरण्यं ॥ यदि हिरण्यं न विन्देत् । शर्करा अक्ता उपदद्ध्यात् ।
तेजो घृतं । सतेजसमे-वाग्निं चिनुते ॥
अग्निञ्चित्वा सौत्रामण्या यजेत मैत्रावरुण्या वा ।
वीर्येण वा एष व्यृद्ध्यते ।
॥
योऽग्निञ्चिनुते ( )। 33 (10)
T.B.3.12.5.13
यावदेव वीर्यं । तदस्मिन् दधाति ॥
ब्रह्मणः सायुज्यण् सलोकता-माप्नोति ।
एतासामेव देवताना ए सायुज्यं।
सार्षिता एं समान लोकता-माप्नोति । य एतमग्निं चिनुते ।
य उचैनमेवं वैद ॥ एतदेव सावित्रे ब्राह्मणं । अथो नाचिकेते ॥ 34 (9)
```

(होता चतुर्.होतृणा७ – स्रुति – श्रंकार – वा – भवन्त्य – " ग्निष्टोमेना – प्नोति – वयार्सि – वयार्सि – सर्वस्याप्त्यै सर्वस्यावरुद्ध्यै – वेद – वृञ्जते – चिनुते – +नव च) (A5) 3.12.6 अनुवाकं 6 –वैश्वसृजचयनम् T.B.3.12.6.1 यच्चामृतं यच्च मर्त्यं । यच्च प्राणिति यच्च न । सर्वास्ता इष्टकाः कृत्वा । उप कामदुघा दधे । तेनर्.षिणा तेन ब्रह्मणा । तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ सर्वाः स्त्रियः सर्वीन् पुर्ः । सर्वं न स्त्री-पुमञ्च यत् । । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ यावन्तः पा⊍्सवो भूमेः । **35 (10)** T.B.3.12.6.2 पृथिव्यां पुष्टि र्हिताः । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ यावतीः सिकताः सर्वाः । । । ॥ अफ्स्वन्तश्च याः श्रिताः । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ यावतीः शर्करा धृत्यै । अस्यां पृथिव्यामधि । 36 (10)

```
T.B.3.12.6.3
सर्वास्ताः ॥ यावन्तो – ऽञ्चानो ऽस्यां पृथिव्यां ।
प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ यावती र्वीरुधः सर्वाः ।
। । । । । । । । । । । । । विष्ठिताः पृथिवीमनु । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ यावतीरोषधीः सर्वाः ।
विष्ठिताः पृथिवीमनु । सर्वास्ताः ॥ 37 (10)
T.B.3.12.6.4
यावन्तो वनस्पतयः । अस्यां पृथिव्यामधि । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥
यावन्तो ग्राम्याः पञ्चावः सर्वे । आरण्याश्च ये ।
T.B.3.12.6.5
देवत्रा यच्च मानुषं । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ यावत्कृष्णायस्<u>र</u>् सर्वं ।
्रेवत्रा यच्च मानुषं । सर्वास्ताः ॥ याव ल्लोहायस्र एं सर्वं ।
देवत्रा यच्चं मानुषं । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ सर्व एं सीस एं सर्वं त्रपुं ।
देवत्रा यच्च मानुषं । 39 (10)
```

```
सर्वास्ताः ॥ सर्व ् हिरण्य ् रजतं । देवत्रा यच्च मानुषं ।
सर्वास्ताः ॥ सर्व ् सुवर्ण ् हिरितं । देवत्रा यच्च मानुषं ।
सर्वास्ताः ॥ सर्व ् सुवर्ण ् हिरितं । देवत्रा यच्च मानुषं ।
सर्वास्ता इष्टकाः कृत्वा । उपकामदुघा दधे ।
तेनर्.षिणा तेन ब्रह्मणा ।
तया देवतया – ऽङ्गिरस्वद – धुवा सीद ( ) ॥ 40 (10)

[भूमे – रिध – विष्ठिताः पृथिवीमनु सर्वास्ता –
उच्यते – मानुष् ् – सीद ( ) ] (A6)
```

# 

## 3.12.7 <u>अनुवाकं 7 –वैश्वसृजचयनम्</u>

# T.B.3.12.7.1 सर्वा दिशो दिक्षु । यच्चान्त भूतं प्रतिष्ठितं । मर्वा सर्वा इष्टकाः कृत्वा । उप कामदुघा दधे । न । । । तेनर्.षिणा तेन ब्रह्मणा । तया देवतया—ऽङ्गिरस्वद्—ध्रुवा सीद ॥

```
अन्तरिक्षञ्च केवलं । यच्चास्मि-न्नन्तराहितं ।
<mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ आन्तरिक्ष्येश्च याः प्रजाः । 41 (10)
T.B.3.12.7.2
गन्धर्वा – फ्सरसंश्च ये । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ सर्वानुदारान् – थ्सलिलान् ।
अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान् । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ सर्वानुदारान्-थ्सलिलान् ।
स्थावराः प्रोष्याश्च ये । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ सर्वां धुनिङ् सर्वान्-ध्वङ्सान् ।
हिमो यच्च शीयते । 42 (10)
T.B.3.12.7.3
सर्वास्ताः ॥ सर्वा विद्युतः सर्वान्थ् स्तनयित्नून् ।
हादुनी र्यच्य शीयते । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ सर्वाः स्रवन्तीः सरितः ।
सर्वमफ्सु चरञ्च यत् । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ ४३ (10)
T.B.3.12.7.4
——— । ॥ ॥ । । । ।
याश्च कूप्या याश्च नाद्याः समुद्रियाः । याश्च वैशन्तीरुत प्रासचीर्याः ।
। ॥ । । । ।
<mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ ये चोत्तिष्ठन्ति जीमूताः । याश्च वर्.षन्ति वृष्टयः ।
<mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ तपस्तेजं आकाशं । यच्चांकाशे प्रतिष्ठितं ।
सर्वास्ताः ॥ वायुं ँवया ्सि सर्वाणि । 44 (10)
```

#### T.B.3.12.7.5

अन्तरिक्षचरञ्च यत् । सर्वास्ताः ॥ अग्निष् सूर्यं चन्द्रं ।

मित्रं वरुणं भगं । सर्वास्ताः ॥ सत्य श्रद्धां तपो दमं ।

नाम रूपञ्च भूतानां । सर्वास्ता इष्टकाः कृत्वा ।

उप कामदुघा दधे । तेनर्.षिणा तेन ब्रह्मणा () ।

तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 45 (11)

(प्रजा-हिमो यच्च शीयते-सर्वास्ताः-सर्वाण-ब्रह्मणैकं च) (A7)

#### **Special Korvai**

(दिशोऽन्तिरक्षमान्तिरिक्ष्य उदारानुदारान् धुनिं मरीचीन्. विद्युतः । । । । सवन्तीर्याश्च ये च तपो वायुमग्निण् सत्यं पञ्चदश)

## 3.12.8 <u>अनुवाकं 8 –वैश्वसृजचयनम्</u>

#### T.B.3.12.8.1

सर्वां दिव ् सर्वान् देवान् दिवि । यच्चान्त भूतं प्रतिष्ठितं ।
सर्वास्ता इष्टकाः कृत्वा । उप कामदुघा दधे । तेनर्.षिणा तेन ब्रह्मणा ।
तया देवतया—ऽङ्गिरस्वद—धुवा सीद ॥ यावती स्तारकाः सर्वाः ।
वितता रोचने दिवि । सर्वास्ताः ॥ ऋचो यजू ्षि सामानि । 46 (10)

```
T.B.3.12.8.2
अथर्वाङ्गिरसश्च ये । <mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ इतिहासपुराणञ्च ।
सर्पदेवजनाश्च ये । सर्वास्ताः ॥ ये च लोका ये चालोकाः ।
अन्त भूतं प्रतिष्ठितं । सर्वास्ताः ॥ यच्च ब्रह्म यच्चाब्रह्म ।
अन्त र्ब्रह्मन् प्रतिष्ठितं । 47 (10)
T.B.3.12.8.3
<mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ अहोरात्राणि सर्वाणि । अर्द्धमासा৺श्च केवलान् ।
सर्वास्ताः ॥ सर्वानृतून्-थ्सर्वान् मासान् । सम्वथ्सरञ्च केवलं ।
॥ । ।
<mark>सर्वास्ताः</mark> ॥ सर्वं भूत्र ् सर्वं भव्यं । यच्चातोऽधि भविष्यति ।
सर्वास्ता इष्टकाः कृत्वा ( ) । उप कामदुघा दधे ।
तेनर्.षिणा तेन ब्रह्मणा।
तया देवतया-ऽङ्गिरस्वद्-ध्रुवा सीद ॥ 48 (13)
(सामानि – ब्रह्मन् प्रतिष्ठितं – कृत्वा त्रीणि च) (A8)
Special Korvai
(दिवं तारका ऋच इतिहासपुराणं च ये च यच्चाहोरात्राण्यृत्न्
```

भूतं नव)

```
3.12.9 अनुवाकं 9 - ब्रह्मा सदस्यासीनो वौश्वस्जान् व्याचष्टे
T.B.3.12.9.1
ऋचां प्राचीं महती दिगुंच्यते । दक्षिणा-माहु र्यजुषामपारां ।
अथर्वणा–मग्ङिरसां प्रतीची । साम्ना–मुदीची महती दिगुच्यते ॥
ऋग्भिः पूर्वाह्ने दिवि देव ईयते । यजुर्वेदे तिष्ठति मद्ध्ये अहः ।
ऋग्भ्यो जाता एं सर्वशो मूर्ति - माहुः ।
सर्वा गति यांजुषी हैव राश्वत् । 49 (10)
T.B.3.12.9.2
सर्वं तेज स्सामरूप्य एं है शश्वत् । सर्व एं हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टं ॥
ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्ण-माहुः । यजुर्वेदं क्षत्रियस्या-हुर्योनिं ।
सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः । पूर्वे पूर्वेभ्यो वच एत-दूचुः ॥
आदर्.श-मग्निं चिन्वानाः । पूर्वे विश्व सृजोऽमृताः ।
शतं वर्.ष सहस्राणि । दीक्षिताः सत्र-मासत ॥ 50 (10)
T.B.3.12.9.3
ा । । ।
तप आसीद् गृहपतिः । ब्रह्म ब्रह्माभवथ् स्वयं ।
सत्य 🗸 ह हो तैषामासींत् । यद् विश्वसृज आसंत ॥
```

```
अमृत-मेभ्य उदगायत् । सहस्रं परिवथ्सरान् ।
भूत एं हं प्रस्तों तैषामासींत् । भविष्यत् प्रति चाहरत् ॥
प्राणो अद्ध्वर्यु –रभवत् । इद्ध् सर्वष् सिषासतां । 51 (10)
T.B.3.12.9.4
अपानो विद्या-नावृतः । प्रति प्रातिष्ठ-दद्ध्वरे ॥
आर्तवा उपगातारः । सदस्या ऋतवो – ऽभवन्न् ।
अर्द्धमासाश्च मासाश्च । चमसा-द्ध्वर्यवो-ऽभवन्न् ॥
अञार् सद् ब्रह्मण-स्तेजः । अच्छावाको उभवद् यशः ।
ऋत-मेषां प्रशास्ता-ऽऽसींत्।
यद् विश्व सृज आसत्॥ 52 (10)
T.B.3.12.9.5
ऊर्ग्–राजान–मुदंवहत् । ध्रुव गोपः सहो–ऽभवत् ।
ओजो-ऽभ्यष्टौद् ग्राव्.ण्णः । यद् विश्व सृज आसत ॥
अपचितिः पोत्रीया-मयजत् । नेष्ट्रीया-मयजत् त्विषिः ।
आग्नींद्ध्राद् विदुषीं सत्यं । श्रद्धा हैवा यंजथ् स्वयं ॥
इरा पत्नी विश्व सृजां । आकूति-रिपनङ्कविः । 53 (10)
```

```
T.B.3.12.9.6
इद्ध्म 🗸 ह क्षुच् चैभ्य उग्रे। तृष्णा चा वहतामुभे॥
वागेषा 💇 सुब्रह्मण्या – ऽऽसीत् । छन्दो योगान्. विजानती ।
कल्पतन्त्राणि तन्वाना-ऽहः । स ७ स्थाश्च सर्वज्ञः ॥
अहोरात्रे पंशुपाल्यौ । मुहूर्त्ताः प्रेष्या अभवत्र् ।
मृत्युस् तद-भव-द्धाता । शमितो ग्रो विशां पतिः ॥ 54 (10)
T.B.3.12.9.7
विश्वसृजः प्रथमाः सत्र–मासत । सहस्र समं प्रसुतेन यन्तः ।
ततों ह जज़े भुवनस्य गोपाः । हिरण्मयः शकुनि र्ब्रह्म नाम ॥
येन सूर्य-स्तपति तेजसे-द्धः । पिता पुत्रेण पितृमान्. योनियोनौ ।
ा
नावेदविन् मनुते तं बृहन्तं । सर्वानुभु-मात्मान् संपराये ॥
एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्य ।
न कर्मणा वर्द्धते नो कनीयान् । 55 (10)
T.B.3.12.9.8
तस्यैवात्मा पदिवत्तं विदित्वा । न कर्मणा लिप्यते पापकेन ॥
पञ्चपञ्चाशतं – स्त्रिवृतः सम्वथ्सराः ।
पञ्चपञ्चाशतः पञ्चदशाः । पञ्चपञ्चाशतः सप्तदशाः ।
```

```
पञ्चपञ्चाशत एकवि एशाः।
। ।
विश्वसृजांं सहस्र सम्वथ्सरं॥
एतेन वै विश्वसृज इदं विश्व-मसृजन्त ।
। ॥ ।
यद् विश्व-मसृजन्त । तस्माद् विश्वसृजः ( ) ॥
। । । । । विश्व-मेना-ननु प्रजायते । ब्रह्मणः सायुज्यण् सलोकतां यन्ति ।
एतासामेव देवतानाण् सायुज्यं । सार्ष्टिताण् समान लोकतां यन्ति ।
य एत-दुपयन्ति । ये चैनत् प्राहुः ।
येभ्य-श्चैनत् प्राहुः ॥
ओं ॥ 56 (18)
(शर्थ – दास्त – सिषासता – मासत – हविष् – पतिः –
कनीयान् – तस्माद् विश्वसृजोऽष्टौ च) (A9)
```

काठके तृतीयः प्रश्नः - (TB 3.12)

 Prapaataka Korvai with starting Padams of 1 to 9 Anuvaakams : 

 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।
 ।

 Korvai with starting Padams of 1, 11, 21 Series of Dasinis : 

 ।
 ।

 (तुभ्यं – तपसा – ता वा एताः पञ्च – हिरण्यं ददाति –

 ।
 ।

 ।
 ।

 सर्वा दिश – स्तप आसीद्गृहपतिः षट्पञ्चाशत्)

First and Last Padam 3rd Prapaatakam of Kaatakam:-(तुभ्य–मों)

॥ हरिः ओं ॥

### **Appendix (of expansions)**

```
T.B.3.12.1.1 - तुभ्यन्ता अङ्गिरस्तमा{21} त्र्याम तङ्काममग्ने {22}
<mark>तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम</mark> विश्वाः सुक्षितयः पृथक् ।
अग्ने कामाय येमिरे ॥ {21}
अञ्याम तं काममग्ने तवो त्यञ्याम रयिङ् रयिवः सुवीरं ।
अञ्चाम वाजमिभ वाजयन्तो ऽञ्चाम द्युम्नमजराजरं ते ॥
(Both {21} and {22} appearing in TS 1.3.14.3)
T.B.3.12.1.1 - आशानां त्वा{23} विश्वा आशाः{24}
्राशानां त्वा ऽऽशापालेभ्यः । चतुभ्यो अमृतेभ्यः ।
इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः । विधेम हिवषा वयम् ॥ {23}
ा ।
<mark>विश्वा आशा</mark> मधुना सं⊍्सृजामि । अनमीवा आप ओषधयो भवन्तु ।
अयं यजमानो मृधो व्यस्यताम् अगृभीताः पश्चवः सन्तु सर्वे ॥ {24}
(Both {23} and {24} appearing in T.B.2.5.3.3)
```

```
काठके तृतीयः प्रश्नः - (TB 3.12)
```

```
T.B.3.12.1.1 - अन् नोऽद्यान्मति{25} रन्विदन्मते त्वं{26}
अन् <u>नोऽद्याऽनुमति</u>र्यज्ञं देवेषु मन्यतां ।
अग्निश्च हव्यवाहनो भवतां दाशुषे मयः ॥ {25}
्राप्ता । ।
<mark>अन्विदनुमते त्वं</mark> मन्यासै शञ्चनः कृधि ।
क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्रण आयू ्षि तारिषः ॥ {26}
(Both {25} and {26} appearing in T.S.3.11.3.3)
T.B.3.12.1.1 - कामो भूतस्य{27} कामस्तदग्रें{28}
<mark>कामों भूतस्य</mark> भव्यस्य । सम्राडेको विराजति । स इदं प्रति पप्रथे ।
ऋतूनुथ् सृजते वशी ॥ {27}
कामस्तदग्रे समवर्तताधि । मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन्न् । हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥ {28}
(Both {27} and {28} appearing in T.B.2.4.1.9 and T.B.2.4.1.10
```

```
<u>T.B.3.12.1.1 – ब्रह्म जज्ञानं{29} पिता विराजां</u>{30}
<mark>ब्रह्म जज्ञानं</mark> प्रथमं पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचो वेन आवः ।
स बुध्निया उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ {29}
({29} appearing in T.S.4.2.8.2)
पिता विराजामृषभो रयीणां । अन्तरिक्षं ँविश्वरूप आविवेश ।
। । ।
तमकैं-रभ्यर्चन्ति वथ्सं । ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्द्धयन्तः ॥ {30}
({30} appearing in T.B.2.8.8.9)
<u>T.B.3.12.1.1 – यज्ञो रायो(31) ऽयं वज्ञः{32}</u>
यज्ञो रायो यज्ञ ईशे वसूनाम् । यज्ञः सस्यानामुत सुक्षितीनाम् ।
यज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु । यज्ञो ब्रह्मण्वा ् अप्येतु देवान् ॥ {31}
अयं वर्धतां गोभिरश्वैः । इयं वैदिः स्वपत्या सुवीरा ।
इदं बर्.हिरति बर्.ही⊌ष्यन्या । इमं ँयज्ञं ँविश्वे अवन्तु देवाः ॥ {32}
(Both {31} and {32} appearing in T.B.2.5.5.1)
```

```
<u>T.B.3.12.1.1 – आपो भद्रा{33} आदित्पञ्यामि{34}</u>
<mark>आपो भद्रा</mark> घृतमिदाप आसुरग्नी-षोमौ बिभ्रत्याप इत् ताः ।
तीव्रो रसो मधुपृचा मरंगम आ मा प्राणेन सह वर्चसा गन्न् ॥ {33}
आदित् <mark>पञ्चा</mark>म्युत वा ञृणोम्या मा घोषो गच्छति वाङ्न आसां ।
। । । । । । मन्ये भेजानो अमृतस्य तर्.हि हिरण्यवर्णा अतृपं यदा वः ॥ {34}
(Both {33} and {34} appearing in T.S.5.6.1.3 and 5.6.1.4)
T.B.3.12.1.1 - तुभ्यं भरन्ति{35] यो देहाः{36}
तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ । बलिमग्ने अन्ति त ओत दूरात् ।
आ भन्दिष्ठस्य सुमतिं चिकिब्धि । बृहत्ते अग्ने महि शर्म भद्रम् ॥ {35}
यो देह्यो अनमयद्वधस्नैः । यो अर्यपत्नी-रुषसंश्वकारं ।
स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निः । विशश्चक्रे बलिहृतः सहोभिः ॥ {36}
(Both {35} and {36} appearing in T.B.2.4.7.9)
```

```
T.B.3.12.1.1 - पूर्व देवा अपरेण{37} प्राणापानौ{38}
पूर्वं देवा अपरेणा-नुपञ्चञ्जन्मभिः । जन्मान्यवरैः पराणि ।
वेदानि देवा अयमस्मीति माम् । अह ए हित्वा शरीरं जरसः
परस्तात् ॥ {37}
प्रा<mark>णापानौ</mark> चक्षुः श्रोत्रम् । वाचं मनसि संभृताम् ।
हित्वा शरीरं जरसः परस्तात् । आ भूतिं भूतिं वयमञ्नवामहै ॥ {38}
(Both {37} and {38} appearing in T.B.2.5.6.5)
<u>T.B.3.12.1.1 – हव्यवाह {39} स्विष्टं {40}</u>
ह<mark>ळ्यवाह</mark> – मभिमातिषाऽहम् । रक्षोहणं पृतनासु जिष्णुम् ।
ज्योतिष्मन्तं दीद्यतं पुरन्धिम् । अग्नि७ स्विष्टकृतमा हुवेम ॥ {39}
स्वष्टमग्ने अभि तत् पृणाहि । विश्वा देव पृतना अभिष्य ।
ा । । । । । । । । उरुं नः पन्थां प्रदिशन्वि भाहि । ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः ॥ {40}
(Both {39} and {40} appearing in T.B.2.4.1.4)
```

```
T.B.3.12.3.4 - अग्नि र्मूर्धा{41} भुवः{42}
<mark>अग्निर्मूर्धा</mark> दिवः ककुत् पतिः पृथिव्या अयं ।
अपार् रेतार्सि जिन्वति ॥ {41}
भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्धिः सचसे शिवाभिः ।
। ॥ । । । । । । । । । । । । । । दिवि मूर्धानं दिधेषे सुवर्.षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहं ॥ {42}
(Both {41} and {42} appearing in T.S.4.4.4.1)
T.B.3.12.3.4 — अन् नोऽद्यान्मति{43} रन्विदन्मतेत्वं{44}
Same as {25} and {26} above
T.B.3.12.3.4 - हव्यवाह {45} स्विष्टं {46}
Same as {39} and {40} above
```

#### Anuvakam 6

in the entire 6th Anuvakam " सर्वास्ताः" apperaing 16 times in short form which are highlighted by us in the text for identification. The expansion is as follows and is common for the all the 16 appearances.

\_\_\_\_\_

#### Anuvakam 7

in the entire 7th Anuvakam " सर्वास्ताः" apperaing 13 times in short form which are highlighted by us in the text for identification.

The expansion is as follows and is common for the all the 13 appearances.

\_\_\_\_\_

#### Anuvakam 8

in the entire 8th Anuvakam " सर्वास्ताः" apperaing 7 times in short form which are highlighted by us in the text for identification. The expansion is as follows and is common for the all the 7 appearances.

## 3.12 For Kaatakam - 3 (TB 3.12)

|            | Dasini | Vaakyams |
|------------|--------|----------|
| Anuvakam 1 | 1      | 10       |
| Anuvakam 2 | 9      | 161      |
| Anuvakam 3 | 4      | 44       |
| Anuvakam 4 | 7      | 121      |
| Anuvakam 5 | 13     | 129      |
| Anuvakam 6 | 6      | 60       |
| Anuvakam 7 | 5      | 51       |
| Anuvakam 8 | 3      | 33       |
| Anuvakam 9 | 8      | 88       |
| Total →    | 56     | 697      |

#### For Kaatakam - 1, 2 and 3

|              | Anuvaakam | Dasini | Vaakyams |
|--------------|-----------|--------|----------|
| Prapaatakam1 | 11        | 49     | 526      |
| Prapaatakam2 | 10        | 62     | 593      |
| Prapaatakam3 | 9         | 56     | 697      |
| Total →      | 30        | 167    | 1816     |

काठके तृतीयः प्रश्नः - (TB 3.12)

## **Summary for entire Braahmanam**

|            | Prapaatakam | Anuvakam | Dasini | Vaakyam |
|------------|-------------|----------|--------|---------|
| Ashtakam 1 | 8           | 78       | 500    | 5232    |
| Ashtakam 2 | 8           | 96       | 547    | 5795    |
| Ashtakam 3 | 9           | 134      | 619    | 6530    |
| Kaatakam   | 3           | 30       | 167    | 1816    |
| Total      | 28          | 338      | 1833   | 19373   |